अध्याय - ५

आधुनिक जीवनदृष्टि और अलौकिक व्यक्तित्व के धनी:
कविवर विजयवल्लभसूरिजी

- अलौकिक कवि व्यक्तित्व के धनी
- श्रीमद् वल्लभसूरिजी (नीतिकार, उपदेशक और सुधारक)
- आरोग्य विषयक ज्ञान
- नीति विषयक ज्ञान
- चरित्र निर्माण
- आभूषण माह
- सप्तव्यसन के दुष्परिणाम
- मानवतावादी एवं समन्वयवादी एवं लोकनायक
- मानवता का साक्षातरूप
- समन्वयवादी कवि
- हिन्दी सेवी संत
- हिन्दी साहित्य में विशिष्ट योगदान
- निष्कर्ष
अध्याय - ७

"आदुनिक जीवंदृष्टि और अलोकित व्यक्तित्व के धनी : कविवर विज्ञवत्लपेशूर्जिती"

साहित्यकार समाज का सर्वाधिक संबंधित व्यक्ति होता है। वह सामाजिक परिसर से तटस्थता का दाया भी नहीं कर सकता है। वह जीवन को चर्चित हिलों में मारता हुआ देखता है और उसे प्रेषण का स्त्रोत मानता है। जीवन और जगत् के प्रति लेखक का कवि की अपनी दृष्टि होती है तथा सामाजिक घटनाओं - समस्याओं के प्रति वह अपनी निजी मान्यताएं बना लेता है। आद कवि ऋषि वाल्मीकि, महर्षि वेदवागि, कवि कुल शिवरंगि तुलसीदास, शूरदास, महालिन कबीर, भारतेन्दु हरिश्चंद्र, गुजराती के साहित्यकार चीर नर्मद, कैलासयाल मृगसी आदि की तरह श्रीमद् आचार्य विजयवल्लभायुर्जिती ने हिंदी साहित्य की रचना की है।

"प्रेमचंदनी साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का साधन मानते थे।" साहित्य सामाजिक होता है तथा मनुष्यात्मा में जीवन को परिक्रमण करने की भावना पैदा करता है। "साहित्यीय पत्तन दृष्टि समस्त कलाकार अपनी रचना द्वारा समाज को विकासोन्मुख होने की प्रेषणा देता है।" साहित्य तो सोचोश्व भोगता है। उसकी उत्पत्ति समाज से ही होती है। क्रिस्तोफर कोंडवेल के अनुसार, "कला मोहनि का यह दान है जो सामाजिक सीमा में उत्पन्न होता है यह मोहनि संदर्भ प्रसाधन तथा मात्र हास-विलास के लिए उत्पन्न नहीं होता।" कला सूत्र मोहनि एक सामाजिक कार्य है।

साहित्यकार को श्रवणि" का दर्जा दिया गया है क्योंकि उसका कल यथार्थ जीवन को प्रतिचित्रित करना होता है। "साहित्य का उद्देश्य सामाजिक अभियांत्रिक मात्र नहीं बल्कि वह प्रेमका शरीर भी है।" इसके लिए साहित्यकार सामाजिक विचारधाराओं का मंथन कर अपने लिए जीवनदृष्टि का निर्माण करता है।

जीवनदृष्टि से तात्त्विक है, जीवन के दृष्टि से दर्शनरूप नवनीत निष्पादन होता है। तो स्वरूपकार जीवनदृष्टि के निर्माण में संरचना पर बल नहीं देते, उनकी स्थान में निरुपित जीवन चैतन्यानी होता है। प्रेमचंद ने तात्त्विक वृत्तियों के अर्थदर्शी और उनसे उत्पन्न होनेवाली जनसामाजिक पीढ़ा एवं मांग को बड़ी वेदान्तपूर्वक अनुभव किया था। प्रेमचंद मानते थे कि समाज की संवृत्ति सेवा से ईश्वर प्रति प्रार्थना का सहयोग करने में ही जीवन की सार्थिकता है। "साहित्य-विद्वान में उन उपासकों की आर्यिकता को हृदय लोकों के ही अपने जीवन की सार्थिकता मान लिया हो, जिनके दिल में दर्द की तड़का और मुहब्बत का जोहर हो... सेवा में आध्यात्मिक आलंबन है। वही हमारा पुरस्कार है।" इन अनुकूलों का समल होकर हम आचार्य विजय वल्लभ की जीवनदृष्टि को समझ सकते हैं। राष्ट्र एवं समाज निर्माण के लिए उनका सपना था कि समाज एवं राष्ट्र अभाव, असंत, शोषण, व्यय, मानन्द तथा अभिशिषितू जैसे बंधनों से मुक्त हो। इस दृष्टिकोण (जीवनदृष्टि) के अनुसार उन्होंने अपने प्रवचन एवं रचनाओं में उक्त बुराइयों के प्रति आक्रोश बहु करते ।

1. प्रेमचंद और भारतीय किसान - हृ. समुद्र बेनुपपी - पृ. २५२
2. हिन्दी उपन्यास - सामाजिक चैतन्य - हों सन्तीर्थक शाह - पृ. ३२६
3. I Ilvivson and Reatisty - क्रिस्तोफर कोंडवेल - पृ. ८
4. माक्केयान और हिन्दी उपन्यास - हों. रंजनानाथ - पृ. ३५
5. साहित्य का उद्देश्य (निष्पत्ति) - प्रेमचंद - पृ. १८
हुए तत्कालिन समाज को जाग्रत किया। उनका लक्ष्य स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत एक ऐसी समाज व्यवस्था को प्राप्त करना है, जिसमें मतुष्य स्वस्थ एवं स्वतंत्र विकास कर सके तथा अन्याय और शोषण से समाज मुक्त हो।

अलोकिक कवि व्यक्तित्व के धर्मी ?-

बर्दिसवर्ध अनुसार "कवि वही है, जिसमें उत्साह हो, जान हो तथा सामान्य जीवन की अपेक्षा जो असाधारण हो, वही श्रेष्ठ कवि है, क्योंकि यदि कवि जान का भण्डार होगा तो ही वह अपने जान को समाज में बीत सकेगा। साथ-साथ कवि का असाधारण होना थी जरूरी है 'सख़्तिए चुमाए दिना जिसे दर्द का अहसास हो वही श्रेष्ठ कवि है।""

कोलरिज का मानना है कि "श्रेष्ठ कवि वही है जो व्यक्तिगत जीवन को महत्व न दे, वह अपने जीवन से बाहर विकल्प के बाहर बातचीत का तटस्थ चित्रण करे। व्यक्तिगत व्याख्या का त्याग करके बाहर समस्याओं को आयोग संयोग के लिए जीवन की अनुभूतियों का चित्रण करके वित्त सभ्यताओं का बताने का प्रयास के वही श्रेष्ठ कवि है।""

कवि ही मानव की संबंधनाशक्ति है, तभी आचार्य देव कवि के लक्षणों के बारे में बताते हुए लिखते हैं कि....

"जाके ना काम, न क्रोध, न लोभ, दुःख नहीं छोड़ को छाही मोह ना जाही रहे जम बाहर, मोह जवाहर ती अति चाहो; बाहर पुनित ज्ञों देव दुरी स्मरण के गुन गाहो, मील-भरी संगीत-व्यंग्य, कौंतरह से उठता है समझो।""

अर्थात् कवि ही जीवन की सच्चाई को बताता है, इसलिए उचित कहा गया 'जहाँ ना पहुँचें तव वहाँ पहुँचें कवि।""

कवि दो प्रकार के होते हैं। एक नैसर्गिक और दूसरा-परिश्रम साध्य। नैसर्गिक कवि हमारे हदय पर शासन करता है और परिश्रम साध्य कवि मोहित का संस्कार करता है। नैसर्गिक कवियों को हम हदय से प्रेम करते हैं और साध्य कवियों की प्रभाव करते हैं। श्री वल्लभसुरी नैसर्गिक माहाप्रवर्तक कवि थे। उनकी कविता हमारे हदय को शीघ्र ही छु लेती है। हम सहज ही उनकी कविता स्वाभाविक प्रभावित होते हैं।

एक वियोगी सच्चा अपने परम ज्ञान (प्रमाण) से मिलते ने लिये आत्र है: जैसे चंद्र चक्र बनेना मधुकर मालुती शिख्री मन मेहा।"

श्री विजयवल्लभसुरी विविध गुणों से भरित थे। वे काव्य का निर्माण नहीं करते थे। बल्कि काव्य उनके मन से स्वतः निरूपित होता है। उनके हदय में काव्य के अर्थ ज्ञों स्वतः विचार होते हैं। उनका समस्त जीवन अलौकिक भवत्सागर था।

श्रीमद वल्लभसुरी भक्षिकसागर में लुंब है थे। उनकी कविता में 'सामर्थ्यति भाव' प्रकट है। वैद्यन भ्रक्त के माध्यम से साधारणितृति तथा सामर्थ्यति का उल्लेख है। 'सामर्थ्यति भाव' सर्वश्रेष्ठ है। इसमें वर्त उपरांत एक ऐसे समाज व्यवस्था को प्राप्त करना है, जिसमें मत्स्य स्वस्थ एवं स्वतंत्र विकास कर सके तथा अन्याय और शोषण से समाज मुक्त हो। अलोकिक कवि व्यक्तित्व के धर्मी हैं। बर्दिसवर्ध अनुसार "कवि वही है, जिसमें उत्साह हो, जान हो तथा सामान्य जीवन की अपेक्षा जो असाधारण हो, वही श्रेष्ठ कवि है, क्योंकि यदि कवि जान का भण्डार होगा तो ही वह अपने जान को समाज में बीत सकेगा। साथ-साथ कवि का असाधारण होना थी जरूरी है। जाके ना काम, न क्रोध, न लोभ, दुःख नहीं छोड़ को छाही मोह ना जाही रहे जम बाहर, मोह जवाहर ती अति चाहो; बाहर पुनित ज्ञों देव दुरी स्मरण के गुन गाहो, मील-भरी संगीत-व्यंग्य, कौंतरह से उठता है समझो। जैसे चंद्र चक्र बनेना मधुकर मालुती शिख्री मन मेहा। विजयवल्लभसुरी कवि विविध गुणों से भरित थे। वे काव्य का निर्माण नहीं करते थे। बल्कि काव्य उनके मन से स्वतः निरूपित होता है। उनके हदय में काव्य के अर्थ ज्ञों स्वतः विचार होते हैं। उनका समस्त जीवन अलौकिक भवत्सागर था। श्रीमद वल्लभसुरी भक्षिकसागर में लुंब है। उनकी कविता में 'सामर्थ्यति भाव' प्रकट है। वैद्यन भ्रक्त के माध्यम से साधारणितृति तथा सामर्थ्यति का उल्लेख है। 'सामर्थ्यति भाव' सर्वश्रेष्ठ है। इसमें
पूर्ण समर्पण भाव होता है। इसे वैदिकों ने 'महामाय' या 'साधारण' कहा है।

"तार हो तार प्रभु मुझ सेवक भणि, जग मां एतु सुनस लीजे, दास अस्पुष्ट भयो, जापी पोता तपनो दयानिधि दीन पर दया कीजे।"

अपनी भावानुभूति के सहज स्फुरने ने उनकी कहिता को सार्वजनिक, सार्वजनिक और सार्वकालिक बना दिया।

श्री बल्लभपुरुषी के व्यक्तित्व अप्रतिम आध्यात्मिक था। जिस प्रकार उनके व्यक्तित्व आध्यात्मिक था, उसी प्रकार उनके काव्य भी आध्यात्मिक भावनाओं से ग्रस्त है। उनके महाकव्य और गीतिकाव्य, विचार और विचार, तत्त्वावलंबी और धर्म सम्बन्धी प्रकट और समाज की समस्याओं, ये सब एक साथ ही उनके निर्मल अनन्तकाल के ज्वोति समूह में उद्यमित होती थी और उनकी प्रत्यक्षानुभूति का परिवेश पहलकर सरस काव्य के रूप में प्राकृत होती थी।

कवि बल्लभपुरुषी ने मानव चरित्र का अवज्ञा सुझाव एवं ग्रंथपत्र से पर्यावरण किया था। मानव के विविध रागालन्क सम्बन्धों राग, देश, हर्ष, शोक, अनुशा, विराग, ईच्छा, छलकपट आदि की उन्हें पूरी जानकारी थी। उनके काव्य में अनेक जगहें पर इनका अंक बना हुआ है। उनके काव्य में मुख्य भाव तो प्रेम ही है जो समस्त सृष्टि को एकता सृष्टि में बौटाहा है। यह प्रेम मानव की आत्मा और प्राणीजगत को स्त्राणस में आपसिलित करता है।

"बिना जीव के मारे मांस कभी भी नहीं बनता।
हिंसा जीवों की करने से जीव नरक में जा जाता।"

'श्री शांतिनाथ चरित्र' में राजा मेघरथ और कपोल पक्षी का प्रसंग मानव की कुछापाया का प्रस्ताव है।

कवि का समस्त काव्य करणा और प्रेम से सिक है। यह निम्नकोश कहा जा सकता है कि इस कवि के काव्य में सहज मानवीय भावों का आवेग है। अभूतियों की संपूर्णता और लघुपृष्ठ संरचना है। सीधा-सादा मानिक सम्भावना है। वह अपने आप में उन्हें महत्त्वपूर्ण बनाता है।

"लोकारोंक प्रकाश जिननर
जिम - गमने रविवर
विश्वस्त पूर्ण अन्तर्यामी
विच्छिन्न आनंद कंद।"

श्री बल्लभपुरुषी के अन्तर का उल्लास वह वर्तमान है, जो उनकी कहिताओं के यन-तन सर्वच्छ लिखित देता है। उनका समस्त जीवन काव्य की अनुपायाकार लिखित है। उन्होंने जीवन प्रेम की अपूर्व मिलास, पूर्ण शांति और ब्रह्मार्याद की अतीती मस्ती से परिपूर्ण था। उनके जीवन का प्रत्येक पहलू काव्य का अवज्ञा स्वीकार है। उनमें भाव प्रवणता है साथ ही नैतिकता एवं उद्देश्यात्मकता का बोझ नहीं है। वे भक्ति की अख्य कुछ सभ्य से सृजित है।

"जल थल कुसुम सुमंद्र पृष्ठी महके।"

"श्री श्रीमभुद जीर्ण" काव्य में उनके यह पक्षित उनके भक्ति परमांत जीवन का सही मूल्यांकन।

1. श्री महाराणा जिन सतवन : व्याल काव्य संस्कृत पृ. 126
2. सचिवालय पदार्थियां : व्याल काव्य संस्कृत पृ. 137
3. श्री पार्श्वनाथ जिनसतवन : व्याल काव्य संस्कृत पृ. 103
कसती है। जैसे समुद्र में जहाज का पंक्ती जहाज को छोड़कर इसके ऊपर उठान तो अच्छा भर लेता है। परंतु जहाज पर चापस आ जाता है। उसी प्रकार किसी भी बल्ल गुजरने पर यथार्थ लोकसंगठन की भावना पूरीत विविध विषयों पर समस्त कार्य स्वीकार की है परंतु उनकी दृष्टि सदैव मन मंडिर में रिअजामान, मनमोहन की रूपमयी छवि के दर्शन में ही स्वीकार है।

"भोला मूरति हें देवी ठें, आनी मन में उमंग हें चरण में परं, आतम बल्ल निज रूप चिन में करं।"

इस प्रकार उनका नसूना जीवन कायम की अनुपम बायुद्ध में ओलंपियो सा। उनका जीवन 'सादा जीवन उच्च विचार' से संस्कारित था। उनकी कविता में परमामा के प्रति प्रवल अनुभव की अनुभूति होती है।

"भक्त सुधारस घोल करी रंग चोल मन्धारी रे।"

अर्थात कवि ने फाइला कि उनका मनस्ती चोला भक्ति सुधारस से घूमा हुआ है।

श्रीमद्भरभुवरुजी जो कुछ बोलते थे, लिखते थे अथवा उपदेश देते थे वह सब आतमा की प्रमाणित, सदस्थान काम का रूपमयारण कर लेता था। वे सौंदर्य के समस्त विषयों को अपनी आत्माश्री से देखते थे।

कवि बल्लभुवरुजी मनसा, बाणा, कर्मणा आतमका महानुभूति थे। वे आतमामा परम्परा थे। उनके अधिकांश कविताएँ 'आत्म-परस' हैं। उनके अनुसार आतमा और परमामा एक ही हैं, परंतु इस एक्स का विभाजन करने-लेने कर्म-समूह हैं, जो भक्ति से तोड़े जा सकते हैं:

"पुजा प्रभु पद जग सिर तिलक लहर सुख आदरकंद।" बल्लभुवरुजी ने अपनी कविताओं में बताता है कि प्रस्तूत व्यक्ति ब्रह्म है, बहुमूल्य रति है, परमामान है और समस्त सुखों का स्वीकार है, परंतु उन्हें अपनी भीतर के अमूल्य हीरे को देखने का प्रयास नहीं किया। इसके लिये निजात का बोध होना आवश्यक है। निजत का बोध अर्थात स्वयं को जानना। यदि हमें निजत का बोध नहीं है तो हम परिधि पर ही जिज्ञासू, केंद्र में नहीं। प्रस्तूत व्यक्ति में यह श्रम है कि वह अपनी निजात (अपनापन) प्राप्त कर सके।

प्रस्तूत व्यक्ति निजात का बीज लेकर पैदा होता है, आंदोलन होने के लिये पैदा होता है। अब यह लाभी है कि वह आत्मानहीन के लिये, सुझ-सुबिधाओं के लिये, नजी सुखों के लिये समहीता करता है।

श्री बल्लभुवरुजी ने अपने महाकाव्यों और गीति-नाटकों में ऐसे दृढ़ नायकों और पाठकों का बर्णन किया है जो अपनी सुख-सुबिधाओं के लिए समहीता नहीं करते। अपितु वे जगत कुलाम के लिए कठोरतम कद्दू को हृदय से ब्रह्मी लेते हैं। उनके महाकाव्यों के समस्त नायक ऐसे ही दृढ़ महानुभूति हैं। उनके गीति-नाटकों के नायक और नायिकाएँ की परिस्थितियों की प्रतिकूलता में अपनी विपुल आतंकशक्त का परिचय देते हैं। इतना ही नहीं, वे प्रतिकूल परिस्थितियों को भी अनुकूल बना देते हैं।

श्री बल्लभुवरुजी के काव्य में नारी को विशेष महत्त्व दिया। वह सरला और मंडला रूप में अंकित है। वह नक्काशी का सुजन करने में सक्षम है। आधुनिक युग में नारी स्वतंत्रता के लिए, आन्दोलन विषय में चल रहे हैं, उनमें स्वतंत्रता और महानायकता है। परंतु श्री बल्लभुवरुजी ने नारी का जो रूप अपने महाकाव्यों और नाटकों में प्रस्तुत किया है वह उपदेश और महामायित है, उनमें समाज और जगत का हित निभाता है। श्री बल्लभुवरुजी ने काव्य में नारी की पौशै तारा का स्पर्श किया है, वह अन्यत्र
दूर्भाग्य है। लोकमंडल में संबंधित कोई भी विश्वविद्यालय का दृष्टि में अपशुद्ध नहीं रहा।

भारत दिवाकर मुगुड़ा, पंजाब के जन्म श्रीमद बलवंभेषु में अपनी रचनाओं में बिष्य के विभिन्न

dेशों के पतन का कारण हिंसा बताया। उन्होंने विश्वसात का संदेश दिया। सेवामार्ग पर चलने से पहले,

स्वर्ण का त्राय करने की बात कही। समाज और राष्ट्र की सेवा ही प्रभुभव्य है। अतएव निवृत्त

भावनाभीम परिधान पहलकर मंदिर जाया और स्वजीवन सफल बनाया। यह उनका संदेश रहा।

श्री बिजयवल्लभसुरियों ने राष्ट्र और समाज को नयी दृष्टि दी उन्होंने आधुनिक मृग में नवचेतना का

संचार किया। उनके कायम में मानवव्यवस्था, समाज सुधार, विश्वसात, समाजवाद, आतंकतोल, दर्शनज्ञानज्ञानप

नामी शिक्षा, राष्ट्रप्रेम, सर्वरचन सदमाभ, मानव एवं, लघु नैतिकता का मंगलकी पीढ़ियाँ संदेश दिया।

“विष और अमृत दोनों एक ही समय भी है।

शरीर और कवच दोनों एक ही कवच में है।

चुनाव का जनमान है, चुनाव कर लो जी।

प्रभु और पशु दोनों तुम्हारे अंतर नहीं है।”

भारत दिवाकर मुगुड़ा पंजाब के क्षेत्र गुरुदेव द्वारा समाज और राष्ट्र प्रेम रश्त्रीय जीवन दृष्टि

की आधुनिक जीवनदृष्टि है। उसमें आधुनिक मृग में नवचेतना संचारित हुई। समाज में संघटन के

महत्व की समझाया। एकता की महत्व को समझाया हुए पूर्व गुरुम ने फयादा कि “मेरे नाम हूँ कि

साम्राज्यांत्यां दूर हो, समस्त जैनसमाज भवानी महावीर के संघ तले एकत्रित हो, भगवान राष्ट्र का

संघटन मजबूत बने। भारत में स्वतंत्रता तभी स्थिर रह सकती है जबकि जैन, बौद्ध, हिंदू, मुस्लम,

सिख, इसाई, पारसी, आदि सब एक है। हम सभी एक है। हम सब सारे मानव बनकर सत्य और अहिल्या

के पूजार बनना है।”

उनके ‘स्थान: सुभाष’ कायम में भक्ति की विविध स्वर लहरियाँ अंगुलित है। उनकी दृष्टि में

अन्तर नहीं है। यसमार्ग ही ब्रह्मलाल का रूप धारण कर लेती है। भक्ति का साध्य गहण करके भक्त

इत्यादि के साथ बिन्दुकुल एक हो जाता है। उसकी सारी व्यक्ति भवाना इत्यादि के साथ मिलकर एकहल

इत्यादि रूप हो जाती है। सारी अनुमोदी व्याख्या अध्ययन एवं, धारणा, ज्ञान और ज्ञान, आराधना

और आराध्य देव अथवा भक्ति, भक्ति और भगवान एक हो जाते है।

“ध्यान ध्यान, ध्यान पद होने, भाव से युक्तिदी सिवसत्त दाहों।

रात दिनस ले पकड़ वरण प्रभु, सांत्व उतरने को।”

संकेत में लेको। तो श्री वल्लभसुरी का कायम वह प्रकाश सत्ता है, जो निराशा, वासना, विरोध,

और प्रतिस्वाराऎ के अंधकार में मारट करके हुए समाज का प्रकाश दे रहा है और भविष्य में भी देता रहेगा

इसलिए उनकी रचनाएँ भुवनेश्वर रल से भी श्रेष्ठ है।

इस प्रकाश उनके कायम की सुधार भूत - भविष्य तथा वर्तमान को सुचारूत करती रहेगी और

समाज का पथ प्रदर्शन करके समाज की उन्नति तथा देश की प्रगति संभव करेगी।

(२) श्रीमद वल्लभसुरियों : (बीतिकार, उपदेशक और सुधारक)

युग पुर्ण वल्लभसुरी विद्या कल्याण हेतु अतिरिक्त ऐसे महामान्य थे जिनका उदय मानवता धर्म

तथा समाज विकास के लिए हुआ था। आराध्य वल्लभसुरी की समाजमुदारत तत्त्वावलम्बी, "सतवृन्दस प्राप्ति",

‘बारहनाम १२’, ‘द्राक्षरत्नपुरा’ ‘श्री चारितपुरा’, ‘श्रावक कर्मि’, स्री की पति प्राप्ता, ‘स्री की
श्रील विषयक ख्यात इत्यादि रचनाओं में नैतिकता, समाजसुधार, मानवोत्कर्ष, राष्ट्र एवं संसार के सुख समृद्धि एवं शांति आदि विषयों को अलोकित करती है।

“दण्ड अनर्थ सदा परिहरिए, सात जंग चंदोचा धरिए,
पानी दही खुली नहीं रखिए।
श्रद्धा करो धरिए दिवस वर्षय
पन्नखड़ान करी मनदंभ सदा परिहरिये।”

श्रीमद वल्लभभूती को सभी रचनाओं से जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है और योग्य मार्गदर्शन प्राप्त होता है। उनकी रचनाएँ ही समाज सुधार के लिए मार्गदर्शन कर सकती हैं इसे कहते तो अन्यक नहीं।

श्रीमद विजयवल्लभभूती ने व्यापारियों को व्यापार नीतिशील होने का उपदेश देते हुए कहा है।

“हस्ताक्षर निर्देश नहीं, भियथा उपदेश ठाल।
तोलमार कृप्या नहीं किये, सत्यत्त को पाल।”

श्री विजयवल्लभभूती जी ने ज्ञानी के हाथों से सुनाते दंग से कही है जो अन्यतः उपयोगी है।

1) “पर की आशा सदा मिलर।”
2) “चारी से इस भव, पर में वध वंशन निहार।”
3) “आत्मलक्ष्मी दातार संतोष में हर्ष अपार।”
4) “लोभ से नरकों में वास।
दग्धगाँजी से दुःख भाव।”

ये चारों सूत्र जीवन की निर्विचार, सुनन्दात और संतोष्प्रद बनते हैं।

श्री विजयवल्लभभूती ने आयोग चतुर-निर्माण, नैतिकता, मानवता, ईश्वर तथा ऐसा पर आधारित रचनाएँ लिखी और हिंदी साहित्य की समृद्धि के साथ - साथ समाज देश तथा विश्व का मार्गदर्शन भी किया।

आरोग्य विषयक ख्यात ?-
आरोग्य ही सर्वोपरि है। स्वस्थ तन और स्वस्थ मन ही जीवन को प्रसन्नता से भर देते है।

‘रस लालज अधिक भरे, होवें रोग प्रचार।
संर माय की हांडी में, खेबें अधिक दार।
या मोटा या नाश हो, देखो सोच विचार।
इसा अधिक खाने से, होवें रोग विकार।”

अर्थात् स्वाद (श्वाद) पूर्ति का लालच अधिक भूषण की पूर्ति करने से अनेक रोग शरीर में फैलते हैं और शरीर नष्ट होता है। उसी प्रकार जैसे संर मर हांडी में स्वाद वजन दालने से या तो ड्रिग्ग बढ़ जाता है या हांडी दूर जाती है। इसी प्रकार अधिक खाने से अनेक रोग होते हैं। गुरुदेव ने ‘उणेद्वृत्त’ की महत्ता बताई है। अधिक भोजन लेने के लालच का त्याग करना चाहिए तभी भवसागर पार हो सकेगा।

“जीव रसभर बनकर कभी कभी दुःख का मार्ग बनाती है।”

1. विजय वल्लभ संस्मरण स्मारिका : साथी रंगित प्रजाश्रीजी मा. साहेब प. 303
इस प्रकार स्वस्थ शरीर ध्यान ही स्वस्थ समाज का निर्माण संभव है। अतः आरोग्य को प्रथम प्राथमिकता देनी जरूरी है। इसके लिए ध्यान को जीतना है।

1) अति मात्रा भोजन त्यसे, होने रोग प्राप्त है।
2) आत्मूलकभी निज हित जानी, रसना पान परिहार है।
3) रसनाबंध जो सरस आहारी, चठ गति दुःख पावे वह भारी।

श्रीमद वल्लभपुरीकी रचनाओं में नवनिर्माण के स्वरिगम सूत्र है जिनसे व्यक्ति और समाज को नई दिशा न्योल्साह एवं न्यव्यक्ति मिलता है।

जो बौह शुभ भव से निज आत्मु कल्याण
तीत सुधारे प्रेम से खान पान और परिहार
अर्थात आत्मकल्याण करना है तो खान, पान तथा परिहार सशल होने चाहिए क्योंकि ‘सादा जीवन उच्च विचार’ ही जीवन सफलता का आधार है।

नीति विषयक ज्ञान ?-

जीवन में नीति का अति महत्त्वपूर्ण स्थान है। नीति से तात्विक है समता पूर्णजीवन साहित्यिक जीवन तथा विषयक जीवन। ज्ञान ही पर चरण न हो तो वह मनुष्य पंगु होता है। इसी प्रकार मनुष्य को ज्ञान के साथ नीति सम्बन भी होना चाहिए। नीतिपूर्ण आचरण से ही पद, प्रतिष्ठा, संतोष तथा इष्ट की प्राप्ति होती है।

“ज्ञानवानु पर चरण विद्वीरः
पंगु समु नहि इष्ट को पावे।”

इसी तरह ज्ञान और कर्म दोनों संसार रथ के दो चक्र हैं। दोनों बराबर चले तो इष्टहत्र प्राप्त हो सकता है।

“ज्ञान-क्रिया दो चक्र जग रथ के
दोनों मिलकर है फलदाई।”

श्री वल्लभपूर्णी के समतापूर्ण दुर्गौतम ने ज्ञाति एमू साम्राज्यविहारक देश को समाप्त किया। ‘आपदाग्रसित’ जीवों को दुःखो से मुक्त करने के लिए लोगों के मन में सोई हुई मानवता को जगाया। कवि ने सम्पूर्ण मानवता को एक रूप में देखा है। जाति, कुल, रंग, रूप आदि का मद (अहंकार करता है) वह पतन के गर्व में गिरता है।

“कुल, जाति, बल, रूप रसम्पन्न, ज्ञान ठकुराई धन फरमाई।
मद आठों में मद करते जीव दीवी बोही उपजाये।”

कुलमद, जातिमद, बलमद, रूपमद, तपमद, पदमद, बिधामद, धनमद ये आठों मद मानव जाति को विभाजित करते हैं। इनके मिटने पर अप्रसंग मानवता के दर्शन होते हैं। श्री वल्लभपूर्णी ने विशेष एकता के लिए और मानवमंगल के लिए इन मदों से मुक्त होना का संदेश दिया है।

वर्तमानयुग में समाज कई समस्याओं से घिरा हुआ है और इन समस्याओं से जीवन प्रकृत हो

1. श्री महाकीर चरित : विकिर पूजा संवाद पृ. 215
"If wealth is lost nothing is lost
If health is lost something is lost
If character is lost everything is lost."

आभूषण मोह ?-
कुड़क की अनुपम रचना नारी है परंतु विनाश और सजन उसी पर आधारित है (कभी-कभी स्त्री समाज का मार्गदर्शन करती है तो कभी-कभी उसी के द्वारा पतन भी हो जाता है)। छोटी-छोटी शूलियों के कारण वह पतन की राह पकड़ लेती है।

नारी की शोभा आभूषण से और भी बढ़ जाती है परंतु आभूषण मोह से कभी कभी यह पतन और समयाँ ख़ड़ी कर करती है।

श्रीमद्भाष्य भाग में अपनी रचनाओं में स्त्री का आभूषण प्रेम बताया है। जो कभी - कभी अभिशाप भी बन सकता है। जिसके कारण कलह, अशांति जैसी समयाँ पैदा होती है।

"सादे कपड़े पहनने भूर्षण नहीं धारे।
कुल दोनों अपने, पितृ भूर्षण उजियारे।"

अर्थात् आभूषण पहनने से शोभा नहीं बढ़ती, परंतु गुणरूपी आभूषण द्वारा जीवन को श्रृंगारित होता है।

1. चारित पूजा: विविध पूजा संग्रह पृ. 84
किया जा सकता है।

“ते ते पाँच पसारिए जेती लाली सोर” इस प्रकार स्त्री ही घर की राती है, मालकिन है अथानु अपनी परस्थिति के अनुसार खर्च करना चाहिए तो वह परिवार को सुधीर स्थ सकती है।

कबिज़ीज़ ने कनक के नशे से बचकर सादगी पूर्ण जीवन की ओर संकेत किया है। आभूषणों का मोह गलत परिशिष्ट लाता जो व्यक्ति उस समाज के लिए थान करता है।

सत्यत्वसन के दुःखपरिपालन ?

सत्यत्वसन राष्ट्र का भयोकर शत्रु है। व्यसन सेवन से समाज खोलता हो गया है और इन व्यसनों के कारण मानव मानवता के मूल्यों को खो बैठा है जिसका विलमिसूरि ने सुन्दर तथा हदत्यस्मािश्व निरुपण किया है।

जुआ, मांसभक्षण, मदिरापान, परस्वीगमन, बैश्यगमन, चोरी आदि दुःखों से बचने तथा परस्वी परस्वरूप से दूर रहने की बात मानव समाज को समझाई है।

9) जुआ ?

जुआ दुःख को आंत्रित देता है। बुद्धि को खराब करता है, परिवार को शोक संतत बनाता है। लोग अपरम होते हैं और समाज में वेड़जानी होती है यह इस लोक का सबसे बड़ा दोष है।

जुआ त्याग ?

- भूति ज्याय मन पर ख्याय तू जुआ अवि दुःखदाई रे।
- कुम्भसन जग में सात जुआ व्यसन विश्वात है।
- कम से जुआती जात हे, बैश्य सब ललचाई रे,
- मानव औरिजन की खान हे, पिण्डों भान की धान हे।
- जुआ व्यसन परमाण है अहिन्त बंदन लपदाई है।

2) मांसतहार ?

मांस जिहवा दृष्टि के लिए मांसाहार करना धीर नहीं होता है। निद्रोष जीव की हिंसा तो पाप है। अन्य के मांस से त्योहार करने वाला अधम होता है। इससे राष्ट्रवाद निर्धार्ती आती है। जीव हिंसा करने से जीव को नरक मिलता है।

मांसत्याग ?

“सात व्यसन में दूसरा भक्षण मांस तत्त्व करता यह दुःखदार है, सुधौं नर समझ त्याग इसका करता। विना जीव के मारे प्राणी मांस कभी भी नहीं बनता हिंसा जीवों की करने से जीव नरक में जा गिरता। समय मात्र तृप्ति के कारण, पर के प्राण हरण करता राष्ट्र सम निस्तों, हिंदू में रहे निरंतर निर्देशता। पर के मांस से अपने मांस का बीच पूरुष योग्य करता निर्धारी इस सम नहीं, लोक में निघूण नर वह कहलाता।
मांस के खानेवाले वो जो स्वूल पशु नजर आता।
कविवर बल्लभ जीवनदया के पशुधार थे। उन्होंने मांसाहार की निरस्थापनिता सिद्ध करते हुए समझाया है। इसके भीतर में जीवनहीं है। यह अभ्रक्ष है। अन्य शास्त्र भी मांसाहार का विरोध करते हैं। इसमें पारंपरिक, क्षुद्रता तथा दानवता के अमानसीय गुण पनपने लगते हैं जो मानवता एवं पर्यावरण के लिए अहिंसक है।

3) मदिरापान ?
मदिरापान अतिशय बुरी लत है। मदिरा सेवी को कृत अकृत का विचेक नहीं रहता सूअर की तथा गांडा होकर गलियों में गुमता है। बेटी को बढ़ के रूप में देखता है अर्थात् वह विचेकत्त्व हो जाता है।

मदिरापान त्याग ?

नहीं बुझता कृत्याकृत्य को, मदिरा पीनेहारजी।
जिम सूअर गंडरी में रूलता, फिरता गली मंजार जी।
भूत पराभव के सम नाचे, राचे करे पुकार जी।
पुरी को बढ़ सम देखे, स्वी सम मात निदार जी।
कलिकाल सर्पज श्रीमद्हेमचंद्राचार्य ने योगसार्वत में मदिरापान के विषय में कहा है मदिरापान से विहल चितवाले जीवेक्षण शरीरी माता को (प्रिय) पत्नी और पतली को माता मातक श्रद्धा व्यवहार करने लगता है।

“पण्य: कादम्बरी - पान - विवशीण्य चेतसः।
जन्नी हा! प्रियाभिनि, जन्नीयतिः च प्रियाम्।”

इस प्रकार सूक्तचाम्पर पर कविमहरात्र ने बहुत जोर दिया है क्योंकि सूक्त राति किसी भी हालत में स्वस्थ समाज जीवन के लिए आवश्यकता नहीं है। मदिरा मुतुष को हैवाल बनाती है। अतः क्योंकि शरीरी के संसार में कोई भी कान नहीं लेता। धर्मचरण भी वह नहीं कर पाता। अतः इससे जितना जल्दी मुक्त हुआ जाय उतना अधिक श्रद्धा होगा।

8) वेश्यागमन ?
वेश्यागमन शारीरिक, आधित्य, मानसिक एवं पारिवारिक संकटों को बुलाता है। यह प्रेम दुःस्फुंग है जो अन्य शास्त्रों का भी पास बुलाकर चक्क को बिराव करता है। समाज में उसका अपस्वर फैलता है। वेश्यागमन किसी भी हाल में स्वीकार नहीं है। वेश्यागमन करनेवाला अपने परिवार को भी शारीरिक, आधित्य एवं सामाजिक हृदय से हानि पहुँचाता है। उसकी समाज में अप्रतिष्ठा होती है। कविवर बल्लभगुरुदेव ने स्वस्थ एवं संस्कारों की रक्षा हेतु वेश्यागमनचृति का डटकर विचेक करते हुए कहा है कि
“निर्लज वेश्या के बश होकर, निज गुण देवे जार।
इस जग में जावे वह जहाँ जहाँ, पावे अति फटकार।
परम्भ नरकों के दुःख सहता, रोवे जरोजार।
ब्रह्मचर्य आतमगुरुवल्लभ, है जग तारणहार।”
कविवर ने वेश्यागमन का विषय करते हुए ब्रह्मचर्य पालनब्रत की प्रतिष्ठा की है। इस ब्रत के पालन से वेश्यागमन जन्य बुराइयों से मुक्ति मिल सकती है।

8) चोरी ?-
श्रीमद वल्लभभद्री ने कहा है कि जिसे चोरी की लत लग जाती है, वह झूठ हत्या तथा बदमाशी से कभी नहीं डरता। चोरी पकड़ी जाते पर दण्ड एवं अपयश मिलता है।
चोरी करने का व्यसन, जिस जीव को लग जाय।
झूठ, खून, बदमाशी से खुफ जरा नहीं खाय।
चोरी से इस लोक में, होवे राज्य का दण्ड।
बदनामी अति पाय के, परम्भ नरक प्रचण्ड।
कवि शिशुमणि वल्लभ गुरुदेव ने चोरी (चौरीब्रति) की भारी निम्ना की है।

8) परस्त्री त्याग ?-
जो परस्त्री का संग करता है, वह मूर्त्व है। परस्त्री विषयातिरि बराबर है, परस्त्री का कभी विश्राम नहीं करना चाहिए।
कविवर ने स्वस्थ प्रसब्य सैलंकक एवं परिवार जीवन के लिए परस्त्री संग का विषय किया है। इससे जीवन कलहपूर्ण अपयशी एवं कठोर्म बन जाता है।

परस्त्री विषयाति है, नहीं जिसका विचार।
चाहत मृत्यु अत्य नर, तिस से शुद्ध की आस।
परस्त्री त्याग की भावना को कविवर वल्लभभद्री ने श्रीरामकृष्ण की सीताहरण की घटना को उद्देश्य करते हुए इस प्रकार समझाया - सती सीता का अपहरण करनेवाले रावण भले ही सीता के साथ अनुशित व्यवहार नहीं किया तथापि रावण ने स्व नाश परिवार नाश तथा अपयश पाया।

“सती एक सीता जग मोटी,
प्रातः समय उठ नाम जापे, नित नरगण की कोटी।
सती को हर कर ले जावे,
कियो न खंडन शील तो भी रावण अति दुःख पावे।
नाश कुल अपजस जग पावे।”
इस प्रकार परस्त्री त्याग ही जीवन को शांतिन्य बना सकता है।

परमेष्टित्व त्याग ?-
पुज्यतव वल्लभ गुरुनाथ ने पूर्णों की तरह रितियों को भी समझाया कि जीवन में पर-पुरुष की छा नहीं पड़ने देनी चाहिए। इससे स्वयं को तथा परिवार को असह दुःख झेलने पड़ते हैं तथा नाम - यश - प्रतिष्ठा भी खराब होती है। विलासिता के लिए पर-पुरुष से बचना चाहिए।
“सती पराये पुष्क का, सामारी परनार
तवाग करे शुभ भाव से, धन मानव अवतार”
स्त्री एवं पुरुष परिपतिनी के रूप में जीवनसाधन एवं परमस्मिर ये। अपना परिवार सुख-समय एवं ख्याति-प्राप्ति के तीनाही से जिम्मेदार है। अतः स्त्री का यह धर्म बना जाता है कि गुमाही जीत को यह प्रबुद्धता नाही के रूप में समझाये।

(5) शिक्षारत्यागः
श्रीमद्वल्लभसूरि ने कहा कि चंद्र श्याम के सुख के लिए हम निदोष प्राणी की हत्या कर देते है। और ऐसा कर के हम राष्ट्र की सम्पत्ति का विनाश करते जा रहे हैं पर्यावरण प्रेम की अभिव्यक्ति द्वारा पर्यावरण की सुंधरता एवं जीवन्स्थल कविस्मरण ने संदेह दिया।
“त्यायो भवि जीव का हनना, मिटे नरकों में जा गिरना।
ब्यसन शिक्षा का रमना, खुल लत दिखा का करना।
खुशी क्षणमात्र की होये, प्राण पशु जीव के खोबे।
सुई कांटे से निज तन में, होवे दुख वैसे पर तने।
भाग रूट जान के प्राणी, बिना अति नीच अतानी।
ऐसे निर्मल को हंटा, जाई नरक में पसता।
धनु दुर्गाई त्यागेमा, आतम बल्लभ धावेहा।”
जीवनसाधन को निर्मूल बनाने के पीछे प्रशंसन नायक का उद्देश्य है - प्राणीविश्व के प्रति प्रेम, सदभाव तथा जियो और जीवन के भावना का प्रसार करना और विगतज्ञी को बढ़ावा देना।
मनुष्य के महाशकु य सातव्यस्तों में बच्चों के कवित्र के संदेह के पीछे कविता की भावना यह है, कि इनके दुखभाव वसा मनुष्य का नीति और आयात्मिक पतन होता है। उसकी पारिवर्षिकता, सामाजिक, वैक्षेपिक चेतना नष्ट होती है। अतः उन्होंने सात व्यसन त्याग को आत्मवंत्कक को प्रचलित भूमिका माना।
“सत्र भस्म राष्ट्र के भयंकर शत्रु है। इन व्यसन - शत्रुओं का हमारे राष्ट्र पर चाचरं और से आक्रमण हो रहा है। सामान्य शत्रु तो शरीर की ही नाश करता है, किन्तु ये भस्मशत्रु तो हमारे राष्ट्र के शरीर, मन, बुद्धि और आत्मा पर हमला करते हैं और धी-धीये इन्हें गुलाम बनाकर इनका नाश कर डालते हैं। इसलिए शत्रु-राष्ट्रों की अपेक्षा ये व्यसनशक्ति दुर्शम अधिक जबरदस्त है।”
“सुनो एक सीख नाथ सारी,
1) पराहारी की प्रति नाथ जानो हरदम खारी।
2) “जरा दिल सोच करो ऐसा,
तिरिसं बसन बसन पर, तिरिसं का बेसा।”
कविता समाजविर्द्ध चिंतक श्रीमद्वल्लभार्य विजय कल्लसूर्यिजीने जीवन को शीलविश्वास प्रभावित करते हुए समझाये -
(2) “विश्व में शोभा वह पाएं,
शीतलताई जो नार बिना आभूषण जग गाएं।”
“पूंजीि सन्म हदयधारी
परशव्या पर पाँव न धरना आतम हितकारी।
न पर वर निरालज हो जाना,
घर-घर फिरत नार शरम विन नीति फरमाना।”

“श्रीमद् हल्लभसुरिश्चरस्यी ने व्यसन-मुक्त राष्ट्र की परिकल्पना की थी। उन्होंने राष्ट्र एवं समाज
tो दासता की जंजीरों से व्यसन करने के लिए व्यसन-मुक्त परक्रमी नागरिकों की महत्वपूर्ण भूमिका पर
बल दिया तथा समाज की स्वतंत्र संरचना के लिए सच्चिदंत्र की महत्वता बताई। आधुनिक युग में विश्व
के राष्ट्र नागरिकों और विशेषकृत से नयी पीढ़ी की नसीनी आदतों से चिंतित है। कविता में इसीलिए
स्वतंत्रता के पूर्व तथा बाद में व्यसन-मुक्त और सच्चिदंत्र पर विशेष ध्यान दिया है। वे नवयुगिनिम्नता राष्ट्र
के महानू अधिनायक एवं भारतीय संकल्प, सम्पत्ति एवं धर्म के धुरघं थे।

3) आचार्यवादी एवं साम्ब्रवादी एवं लोकनायक ?-

संत श्रवण का अर्थ होता है शांति अर्थात् जो स्वयं शांत हो और अयो को भी चन्दन सी शीतल
प्रदान करे। संत वही है - सच्चाई जिसका नाम है सेवा जिसका धर्म है और सहनशीतलता जिसका ध्यान
है। संत स्वार्थ निरपेक्ष होता है और जिसके अणु-अणु में लोकनायक्य की भावनां स्पष्टित होती रहती
है।

श्रीमद् हल्लभसुरिश्चरस्यी सच्चे अर्थ में संत थे। उनके सम्पर्क में आते-जाते उन्हें भुलिया,
आया फकीर कहते थे। एक अजीब सी मस्ती उनकी जीवन में थी। उनकी जीवन मानता से मंडित था।
सच्चे संत का लक्षण है उसकी मानता। उनकी दृष्टि में मानता सामूहिक सामंजस्य तथा सार्वजनिक
ध्येय को अपनाकर करता और मानत को व्यक्तिगत संकुचिता से उपर उठाकर प्रस्तर प्रेर के लिए प्रेरणा
dेता है। लोकनायक जी का अर्थ है लोक अर्थात् समाज को नायकत्व प्रदान करनेवाला सही दिशा में ले
जानेवाला अग्रणी। वैधिक परम्परा को देखा जाए तो भगवान श्रीमानराध्य, भगवान श्रीकृष्ण, ईसा
मसीह, मोहम्मद साहब पैगम्बर, गौतमबुद्ध, महादेव स्वामी, श्रीशाियदास, मुस्लिम, भैरव
कुंदलाक, स्वामी दयानंद सरस्वती, श्रीमद् विजयानंदसरस्वती महाप्रज्ञ (आलमाराम) महान गोपी,
तथा जयप्रकाश

नागरक्षण आदि। अपने समय के समाज का दिशार्देश कराया और समाज को समुच्चत बनाया। इसी
लोकनायकों के प्रतीतियों पर आचार्य श्रीमद् विजय लोकनायक ने अपने कदम बढ़ाये और तत्त्व मानवता के आँसू
पौछने का कार्य किया।

विश्व-विश्वृत आचार्यवाद श्रीमद् विजय लोकनायक जी का ध्यान के महासागर थे। उनके शरण-क्माल में चाहे सामाजिक जन हो, चाहे राजीव-श्रीमंत - सबको सामान्य रूप से कुपा प्राप्त
होती थी। वे निर्देश एवं शांतसब्बाहिे द्वारा संत थे। वे छोटीसगुणमुक्त गुरु थे। "भूमिजनों का हंसन

1. वल्लभ प्रयाचन भाग - 2 वसंतों से राष्ट्र को उड़ाएं निबंध पृ. ४५७
शारदकलीसी नदी के जल के समान होता है । वे पश्चिम की तरह तरह बंधनों से मुक्त और पूर्वी की तरह समस्त सूर्य-नुक्सानों को समावेश से सहन करते जाते हैं ।” हमारे गुरुदेव भी इन गुणों से मण्डल मिलनुदः में स्वर्णशील बिखरे गए, अल्पभाषण में भी मातृजी रजस्वल करते थे ।

आचार्य वल्लभसूर्धी के अभाव धीरजांग जतनमुदाद के लिए कर्णु के अपार पराक्रम के समान थे । उनके जीवन के कई प्रसंग और घटनाओं उनकी इस उदात्त मानवीयता के साधन में प्रतीत होते हैं । संस्मार, व्यापार, साधना, प्रभाव, समाज, बुद्धि, अपोषित, समाज-सुधार, आदर्श-समा, नारी प्रतिष्ठा के दिनानौके और देशप्रेम उनकी सकृति, समुच्चयतित मानवीयता के पहलु हैं । राष्ट्र-संत कविता उपाध्याय अमरसुन्दरी के शब्दों में, “आचार्यश्री बहुत कोमल, संवेदनशील, तथा सहि वच्ची थे । उनके अंतर का क्रुण कुण उज्ज्वल मानवीय गुणों से स्थिरता था । वे कर्णु के तो जीतित प्रतीक थे ।” आचार्य प्रवर चत्तम गुरुवार रुपाइटा महामाता थे । उन्होंने समाज की गति को पहचान-पक्ष कर समाज में गति और मोड़ लाने का प्रयास किया । दुख व आफतों में घिरे समाज को जगाकर उसकी मात्रा धार्मिक उपलब्धि ही नहीं, समाजीय प्रथम के साधन करने तथा समाज को समाजविधिय आपनों था । इस जीवनस्वरूप को सफल बनाने के लिए गुरुवार अंत के कवित्त व उपविश्वील रहे थे ।

संत कवि वल्लभसूर्धी ने मानव का श्रद्धार्च और महाकाव्यों का सकृति निरूपण करते कायाएँ में किया । उन्होंने बताया कि मानव की बहिष्कारिता उसे पतन की ओर आगास रही है । यदि सुखी होता है तो उसे अन्तर्मुख होकर जीवन होगा । समस्त जनता की शांति मानव की अत्मसृजना पर निर्भर है । कविश्री की उद्ध से अन्तर्मुखी जीवन की कलामक जीवन है । कलामक जीवन संतोष, क्रम, करणा और परीक्षण से विश्वसित होता है । यह कवि की मान्यता है दूसरे शर्मों में परमार्थी जीवन कलामक जीवन है, स्वाभी जीवन कलापिती होता जीवन जो कुरूप और धूमसप्त है । अन्तर्मुखता को समझने हए कविश्री ने अपने महाकाव्यों के महान् नायकों के भाष्य से यह बताया है, कि गहरी जड़ों वाले दृष्टि का प्रभाव धार्मि की गहराईयों से कुछ अद्वय स्थूल करते हैं और यह किसी भी आंधी का मुख्यता करने में सक्षम होता है । गहरी जड़ों वाला यक्षिक ही परायणों द्वारा प्रतिष्ठित होकर परिवर्तन के विरुद्ध न केवल अड़िया खड़ा रहता है, बल्कि उसकी चुनौतियों की भी स्वीकार करता है । अन्य लोग होते हैं जो परिवर्तन को झुलाते हैं, उसमें अपने को बचाए रखते हैं भी सफल हो जाते हैं लेकिन इसमें शक्ति विश्वास भी हो चुके होते हैं, अलग - अलग पड़े होते हैं तथा कट्टाओं से भर जाते हैं ।

यह एक विचित्र सच्चाई है, कि विज्ञान को पूर्णरूप स्वीकार करने और परिवर्तन के सिद्धांतों का दाया करनेवाले अधिकांश आधुनिक समस्त इन्हीं अलग-अलग पड़े तथा कट्टाओं से भरे व्यक्तियों से निर्भर होते हैं । परम्परा को आमूल नकारक इन लोगों ने आधार की ही नष्ट कर दिया है, सामाजिक रूप से असुरक्षित, मनोवैज्ञानिक रूप से प्यारायुं हुए ये व्यक्ति जस-सी उत्तरजना की दशा में हिंसा का आश्रय लेते हैं ।

श्री वल्लभसूर्धी-स्वामी तथा धर्म की प्रकृति और वैभव की विपुलता में संसार लाग कर दीर्घता लेते हैं । वे अहंकारों को विफलता कर दिन की भूमि पर विहर करते हैं । क्रोध की आग को क्षमा

1. श्री सूर फंताम शूर
2. कलिकाल कल्याण का आमूल : ढैं. लक्ष्मीलल शिवेशी पृ. 16
जल से शांत करते हैं। लोभ के दल-दल को छोड़कर संतोष के कुसुमवन में भ्रमण करते हैं और माया की ठगिनी छल-छाया को छोड़कर सरलता की नदना वाटिका में विश्राम करते हैं।

“तन धन जोबन आउँछ जैसी कपटी धाम। चंचल पीपल पान जिम-जिम चंचल गज़कै।”

अर्थात् मोह-माया बंधन का त्याग करके ही जीवन की खुशतमा बनाया जा सकता है।

“मोह-माया, ममता हुँकाई इनसे तुमने प्रीति लगाई। व्यामो चेतन इनकी तथ सूर चेतन है, मेरे जैसा मैंने किया कर काम तू ऐसा। भेद नहीं फिर अपने साथ।”

इतना ही नहीं। वे नाटक-नाटिकाएँ और विविध पात्र स्वस्थ परम्परा को क्रूर-विक्रूर नहीं होते देते। शिवशंकर विषयान कास्बे जग-जीवन को अमूर्त पिलाते हैं। उनकी ओरों में कटृत नहीं, अथवा प्रेम का शीतल अंजन रमा रहता है। फलस्वरूप कोथी श्रामासील बन जाते हैं, घुप्पित प्रेमपुत्रानी बनकर कल्याण के मार्ग पर अपरास होते हैं। वे विस्तृत पात्र प्रतिष्ठा पवन को वापसी वायु में परिवर्तित कर देते हैं। आधुनिक युग में और सभी युगों में ऐसे विस्तृत और नहावू व्यक्तियों की विचारानाता आक्षेपक है। जगत-मंगल के ये आधार-स्तम्भ हैं।

मानवता का साक्षात रूप?

मानस के गुणों को अपनाकर जीवन सफल बनाना मानवीय गुण हैं क्योंकि मनुष्य जन्म नूतन है, जो जन्म जनान्तर के बाद प्राप्त होता है।

“नरी धीर पापाण व्यायकर
दुर्भ अवसर पायो।
चितामणि तज काय नसल सम।
पुरुस्ल लोभावो।”

‘श्री पारस्नाथ चतुर्स’ के नायक श्री पारस्नाथ कमठ के द्रोष को अपने प्रेम से मिलाते हैं और भगवान महावीर गोशालक की क्षुद्रता को अपनी करुणा से धीर डालते हैं। शुद्र पात्र प्रेम-पीपुल पीकर अपना कल्याण करते हैं। ‘श्री शाक्तिनाथ चतुर्स’ के राजा मेघस्थ की करुणा ने एक पक्षी की खारी अपने जीवन को दास पर लगा दिया था। इस प्रकार उन्होंने पशु-पक्षी आदि प्राणियों के प्रति मानवीय करुणा और प्रेम का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया।

कविश्री एक और राजा मेघस्थ के उदाहरण द्वारा पशु-पक्षी के प्रति मानवीय प्रेम दर्शाते हैं, जो दूसरी ओर ‘सप्तव्यसन-त्याग पदावली’ के अलंगर शिकार-माहासाहर प्रसंग में मानव की कृत्ता पर श्रीम प्रकट करते हैं। इस प्रकार वे प्रेम की विशेष-मंगल का आधार बनाते हैं और हिंसा को समस्त कब्जा की जड़ कहते हैं।

मानव की कृत्ता ने इस जगत को कुरुष, दुःखदारी और भयानक बना दिया है। ऐसी कविश्री

1. बारहमासा: वर्तमान काव्य सूचा पृ. 641
2. मुद्रगल गीता: पृ. 510
की मान्यता है।

चर्मानुप्रयोग में सीन्द्र-प्रेमी मानव की ज़रूरत का उल्लेख करते हुए ‘यातना बिना सुनदता’ नामक अन्तराष्ट्रीय संस्था ने जरूरत खर्च करने वाले कुलों पर प्रकाश डाला है। उनके अनुसार ‘पशु-पक्षियों की लगभग 130 प्रजातियों संसार से विलुप्त हो चुकी हैं और यही हाल रहा तो 280 प्रजातियाँ विलुप्त हो जाएंगी।’ वैज्ञानिक परिक्षण में लाखों बन्दर भीत के पाट उतारे जा रहे हैं, असंख्य भंडार उनकी टांगों के व्यंजन के लिए मारे जाते हैं। इसके अतिरिक्त सर्प, मारस्मर, कुंडु सह आदि भी मानव की भीतिक सुनदता के लिए यातनापूर्वक मारे जाते हैं। इस तरह मनुष्य जानवरों और पशु-पक्षियों को अपने अस्थायी लाभ के लिए तथा श्रेष्ठ शीक के लिए मार रहे हैं, जबकि पर्यावरण और परिस्थिति को बनाए खोने के लिए मनुष्यों को जिंदा रहने के साथ-साथ पशु-पक्षियों का जिंदा स्वभाव भी आवश्यक है।

इस तरह मनुष्य जानवरों और पशु-पक्षियों को अपने श्रेष्ठ आनंद और लाभ के लिए मार रहे हैं जबकि पर्यावरण और परिस्थिति को बनाए खोने के लिए मनुष्य के जिंदा रहने के साथ पशु-पक्षियों को भी जिंदा स्वभाव आवश्यक है।

बुड्डों की महिमा गाते हुए किविर वल्लभसुरीजी ने ‘आदिनाथ चरित्र’ में बताया कि भगवान आदिनाथजी ने अशोक बुड्ड के नीचे दीँका लेकर उसी बुड्ड की छाया में केवलजान प्राप्त किया। रायवरुख के नीचे उनके प्रवचन भीमर की धारा प्रवर्धित हुई जिससे जगत क्षय सुधा। ‘श्री शातिथाना चरित्र’ में श्री शातिथाना प्रभु नंदीसुर की छाया में केवल जान प्राप्त करते हैं तथा श्री पार्श्वनाथजी अशोक बुड्ड के नीचे दीँका लेटे हैं तथा कादम्बी आदि में क्षमाश्रोभित सुखोर के निकट ध्यान धरते हैं एवं धारीकी वृक्ष के नीचे परम जान प्राप्त करते हैं। भगवान महावीर अशोक बुड़ तले दीँका लेते हैं तथा शालुकुँक के नीचे केवलजान से विश्रुतित होते हैं। किवि ने यात्रायान सापन, कृदन्त आदि अनेक बुड्डों एवं फल-फूलों का सरस वर्णित किया है।

तालम्पूर्य यह पर्यावरण और राष्ट्र की समया को सुधारित खर्च है। तो पशु-पक्षी तथा बुड्डों को भी जिंदा स्वभाव होगा।

मानव भीतिक सुख-सुविधा एवं मानस की खोज में एक बात की भूल जाता है कि उसके निःस्तर अस्तित्व का आधार यही दुनिया, केवल यही दुनिया है और यह केवल मनुष्यों की ही नहीं है। फिर चाहे वह मनुष्य सम्पूर्ण और परित्वर समाज का हो अथवा चिपित और भूखा हो। चाहे वह हत्या और लूटमार तक में सक्षम हो अथवा अपनी स्था करने में सर्वथा असक्षम हो। मानव की दुनिया एक पराशीत दुनिया है। एक ऐसी दुनिया जहाँ साधनों, खनिजों, वनस्पतियों तथा जीवों का अविचारपूर्ण दोहन किया जा रहा है।

हम अपनी पराशीत को आकांक्षित में बदल सकते हैं जैसे कि अपनी आधुनिक कहने वाली दुनिया में हम कर ही रहे हैं। अपने तालम्पूर्य में हम सब कुछ निगल रहे हैं और दुनिया के संसाधनों को नष्ट कर रहे हैं।

श्रीमद्वल्लभसुरीजी ने अपने काव्य में विवेकशील मानव-समाज का वर्णित किया है जो
वास्तविक और जीविक संस्कार के लिए सतत जागरूक और प्रवचनशील हैं। उनकी दृष्टि में उनके संस्कार से आयुर्विज्ञान और भौतिक सृष्टि की असंख्य अमृततारामें प्रवचित होती हैं।

श्रीमद्वल्लभ सूरजी ने अपने काय प्रभावित और अपरिहार्य यापक चर्चा की है तथा बताया है कि ‘अहिंसा से जीविक और वास्तविक सम्पदा का संस्कार होता है तथा अपरिहार्य से साथों का सीमित और विवेकपूर्ण दोहन होता है।’ उनके काय में मानव की क्रुद्धा और मैदी से प्रभावित विश्वस्तित और जीव-सूक्ष्म का नमोचन वर्ण हुआ है जिसमें पद्मा आत्मदेशियों होकर कहते हैं, हाथी बच्चा सरस्वति के जल को अपनी सूबा में मरकर धाराली महामुनि श्री वशिष्ठ में छिड़कते हैं, भूम चौली भरते हैं। यही नहीं, पतन पुलकित होकर बहता है, फूल खिल जाते हैं, सरस्वति कमलों से सुशोभित हो जाते हैं, प्रकृति फल-फूलों से भरपूर हो जाती है।

श्री वल्लभसूरजी ने न केवल उदात्त और विराट मनुष्यों का ही अंकन किया है, अपितु श्रूद्ध और श्रूद्धतम मानवों का भी चिन्तन-चित्रण अत्यन्त मनोवैज्ञानिक विपा पर रहा है। ‘श्री आदिनाथ चरित्र’ महाकाव्य के पात्र राजकुमार इत्यारण और वित्तपूर्ण विकृत युवापीढ़ी के प्रतीक हैं जिनकी उच्चस्तरता समाज और राजद के लिए पालक है। उनकी श्रूद्धता विद्वान्मणिकुली के सत्यन्य से विगतित हो जाती है और वे मानवता से शिविरित होकर सेवाभर्य में जुड़ जाते हैं। कविश्री ने युवापीढ़ी के संस्कार के लिए सत्यंग, सत्याभिषेक, सत्यायाम आदि को उजारपूर्ण माना है।

श्री वल्लभसूरजी ने वैभव-सम्मान राजेश्वरों और धनकुबेरों को अपने दृष्टिकोण के कारण दुर्गति में गिरते बताया है और अपरिहर्य अपेक्षित मनुष्यों को सुरक्षा से ऊँचाई के शिवाय की धर्म को पूर्त हुए दर्शाया है। ‘श्री शालिनाथ चरित्र’ महाकाव्य के पात्र राजा दमितारी और ‘श्री महावीर चरित्र’ के राजाधिराज नारायण त्रिपुरा अपने दृष्टिकोण से पतन की खारी में गिरते हैं। इसके विपरीत वैभववीणी अपरिहर्य गुमलिक अपनी सत्य और विनयपूर्ण भक्ति से ऊँचे उठते हैं। जब श्री आदिनाथ भगवान का राज्याभिषेक होता है, उस प्रसंस में गुमलिकजन कलह-पत्रों में सरस्वति का स्वच्छ जल लेकर आते हैं और राजसी देवीभूमि में शिविरित भगवान के दाहिने अंगुली का आभिषेक अत्यन्त विनय-भक्ति से करते हैं। उनकी भक्ति और विनय से प्रसंस होकर इत्यार महादेव वैभवभक्ति ज्ञातन्त्र के उनके लिए विशेषताग्रस्त (वर्तमान अंगोंड्रिया) का निर्माण करते हैं। इस प्रसंस को कविश्री ने ‘श्री अत्याधार तीर्थ पूजा’ में आर्यत नन्हा श्रीली में अंकित किया है:

आपने गुमलिक जल को लेकर, देखे नहुं श्रूमारी।
दक्षिण अंगुलु जल सींचे, उत्सव मन में धारी।
गुमलिक नर का देख विनयपूर्ण, नगरी चित्रिता साती।
इत्यार दक्ष वैभवभक्ति, नाम अयोध्या जारी।

‘श्री मनकमूति काव्य एकाकी’ का छोटा बालक अपने दीक्षित पिता श्री शिवानंद सूरजी की खोज करने के लिए अकेला ही पैदल निकल जाता है। वह अपने पिता को पातलिपुत्र में अत्यंत परिश्रम से खोज लेता है और उनसे दीक्षा लेकर महान बनता है। बालक मनक की कथा बालक की ओजस्विता और धीरज की अनुक्रमणीय कथा है, जो यह प्रकट करती है कि परिश्रम और लगन से बामन
रूप छोटा बालक नामायण के समान विराट बन सकता है। आवश्यकता है उसके भीतर की शक्ति को सही दिशा में मोड़ने की।

श्री वल्लभ सूरजी ने नवपीढ़ी को संस्कारित करने के लिए शिश्नक और शिश्नक की भूमिका को महत्त्वपूर्ण मानता है। आचार्य श्रीमंक सूरि नवदीपीड़ी बालमूर्ति मनक की शिश्नक के लिए ‘धर्मकृतिक सूत्र’ की रचना करते हैं। इस ग्रन्थ को वे समाज को सौंप देते हैं। उनकी लोक-मंगल भावना का कविविशेष ने इन शब्दों में वर्णन किया है: ‘जग जीवन आनन्द, होमेव पदते छन्द।’

कविविशेष इसमें साहित्यकला को सत्याभिषेक रचना को विशेष दिया है, जिससे बालक सुसंस्कार-सम्प्रदाय होकर जगत का आनन्द प्रदान कर सके। शिश्नकों को भी सम्बोधन है कि वे आचार्य श्रीमंक सूरि की तरह बालकों को शिश्नक प्रदान करें, जिससे वे राहु और समाज को समृद्ध कर सकें। वे केवल वेदवन्धेय शिश्नक ही न रहकर गुरुपद को शोषित करें।

श्री वल्लभसुरजी की दृष्टि अशूलंक्षार की ओर विशेष रूप से पड़ी। स्वतंत्रता आन्दोलन में गांधीजी ने इसका उद्देश्य से प्रचार किया था। श्री वल्लभसुरजी ने अपनी काव्य-कृतियों और प्रवचनों में अशूलंक्षार का सन्देश दिया है। ‘श्री जव्वलकुमारी गीति-नाटक’ के पाठ भ्रमण आदत हैं, परंतु वे अपनी साधना से महानतम सिखर पर पहुँचते हैं। कविविशेष ने कर्म को महत्व दिया है। इस प्रकार उन्होंने बताया है कि उच्च कुल में जन्म लेने से ही कोई महान नहीं बनता, मनुष्य अपने कर्म से ही ऊँचा और नीचा बनता है।

कविविशेष की दृष्टि में प्रत्येक धर्मसंस्कार व्यक्ति का यह कर्म होता है कि वह अपनी अन्तर्जन्ता के उजाले में जड़ हुआ, अन्याय और अनीति का विरोध करें। इस परिस्करण के आधार पर उन्होंने समाज-सुधार का मार्ग अपनाया।

श्री वल्लभसुरजी ने यह दशाया है कि नारी-उपचार के बिना समाज का विकास असम्भव है। उन्होंने देश की प्रथा की कटो शब्दों में संरक्षण की है तथा इसे समाज और राष्ट्र के लिए कल्पना माना है। देश के नाम पर बहुतों के जलते जसम, पुरातन और जड़ पुरस्कारों की आड़ में देवियों का शोषण यह नार्यस्तु पृथिवी स्वर्ग नेत्रवत्तात्व सेनेतेकतात्वात भारत की कैसी विश्वसनीय सत्यी दुनिया को दिखा रहे हैं? उन्होंने देश के विरोध में कहा: ‘हाँ, देशों, वहाँ लड़कों का नीलाम हो रहा है। आज तो वर-विचार का रोग लगा हुआ है। यह रोग इतना चीरिया है कि समाज इस भयानक नीलें-नीलें और कैनसर रोग के कारण मृत-प्रायः बन रहा है। देश युवकों के लिए यह बेहद शर्म की बात है।

कवि ने ‘चालित पूजा’ और ‘श्रद्धाश्रवण पूजा’ काव्यों में व्यक्ति, अनमोल, विचार, बाल विचार आदि का कठोरतम शब्दों में विरोध किया है। उन्होंने अन्य विधिपत्रों से मुक्त होने के लिए शिश्नक प्रसाद पर बल दिया है। उनके उपदेश से भारत के कोने-कोने में अनेक शिश्नक संस्थाओं, पुतल्कलम आदि खुले। उनकी प्रेमसे से अनेक कन्वाशालयों, भी खुली। नारी-शिश्नक पर उनका विशेष आयाम था।

श्री वल्लभसुरजी की दृष्टि में प्रदूषण जग-जीवन की भयंकरतम नासिक है। जहाँ देशों, वहाँ प्रदूषण-धनि प्रदूषण, वातु प्रदूषण, अत्र-जल प्रदूषण आदि। इन प्रदूषणों में सबसे भयानक प्रदूषण है - आध्यात्मिक प्रदूषण। उन प्रदूषण मानव के भीतर के आध्यात्मिक स्वास्थ्य को विचक्त कर रहे हैं।
अब तक हमारे अनुपम बताता है कि हम अक्सर विकास की किसी एक रह पर नाक की सीधे में बढ़ते चले जाते हैं। यह नहीं देखते कि हमारे विकास का स्थान अपने चेहरे किस तरह का तुटा-फटा रास्ता छोड़ता चला जा रहा है या स्थः की उद्देशी धूल से आसपास का वातावरण कितना दृढ़ हो रहा है? हम अब तक उयरों की उद्देशी चिन्ताओं के उच्चायों पर मोहित होते रहे हैं। इस बात की ओर हमारा ध्यान नहीं गया कि इन चिन्ताओं का धुआं हमारे आकाश को कितना विषमास बना रहा है, या धरती की वरस्थि और जीव-सम्पदा को नष्ट कर रहा है।

हम तभी सुख-पूर्वक जी सकते हैं, जबकि हमारा आकाश नीला दिखा सके, पानी पिरल रहे, जंगल हरे-भरे हों, पश्चिम-पश्चिम छलांग लगाते, चीनी भरते और कलोल करते दिखाई दें। बसलुङ: यह जिन्दा रहने की शर्त है। हमें ये स्वीकारना होगा।

“फूलों की बहार, फूलों की बहार, प्रभुजी तारे अंगे फूलों की बहार, चम्मा, मुकुट, शय चमेली, मोहर केन्द्र लार। जासूड नाम पुजारा, सोतिया पातल खुशबुदार। कुमुडबल गुलाब केवल अर्थिदल पुल बदर, छाई मोलसी ले मुच्चे आँध्र की सार। भाव से पूजे फूलों से प्रभु को आत्म वल्लभ तार।”

इस प्रकार बृज्यों, फूलों तथा कलों से उन्हें अतिशय प्रेम था। वे मानते थे कि बृज्यों को लगाते से जीवन ठहरहला उठगा।

गुलाब बताता है कि वरस्थि धीमक और आध्यात्मिक सुख का आघार है। हरे-भरे रंगों और उपवन में बृज्यों की छाया-तने आध्यात्मिक शक्ति को जांगल करते देख महाकाव्यों के नायक अपनी विराटा और महानाटा के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचते हैं। इस प्रकार कि वे यह स्पष्ट बताता है कि यदि हम सुखी बनना चाहते हैं तो वरस्थि को सुप्रभूत स्वभाव होगा। वरस्थि के नाश होने पर प्रदूषण बढ़ता जाएगा, वनस्पति नष्ट हो जाएंगे, वृक्ष-शिखर नष्ट हो जाएंगे और पर्यावरण असंतुलित हो जाए।

वरस्थि के निर्माण में पूर्ण सक्षम रहा हैं। महीत जीवन का आधार है। इसकी रचना करने वाले हरे-भरे क्रांति को हटा देने से महीत की देख उड़ जाती है और बांध, कटाच तथा महीत का बहाव तबाही मचा देता है। बृज्यों के कटने से अकाल की काली यम-छाया मंडराती है। मानव के सबसे विश्वासी भूत बृज है। जो देश अपना भविष्य सुक्ष्मता स्वभाव चाहता है, उसे अपने रंगों की और जीव-सम्पदा की धर्मों-भूति देखभाल करनी चाहिए।

तथा जीवन के खुशानुमा बनाना हो तो बृज्यों का जतन करता ही हमारी फर्ज है, तथा बृज्यों का विनाश करनेवालों को कहीं सजा देकर उन्हें साबक दिखाना चाहिए।

श्रीमद् वल्लभ्युपस्वरूपजिजी ने विश्वास की वर्तमान और मनुष्य तथा प्राणिमात्र की सुधा-समृद्धि के लिए व्यसनबुध मानव समाज की संकल्पना की है। उन्होंने व्यसन को समस्त दुःखों की जड़ बताया है। देश का प्रबुद्ध पाता नामाजी, इस बात को लेकर व्यय एवं चिंतित है कि होटलिया संस्कृति (Hotel Culture)

1. पुष्पगीत : वल्लभ कार्य सुधा - प. ४५५
के दुर्भाव में मदहोशी में धूमी इस महान राज्य एवं महान संसार की समग्रता पीढ़ी से क्या उम्मीद की जा सकती है ? क्या यह मदहोशा, पथक देश, पीढ़ी भारतमाता एवं संसार को आत्मकाव्य, आत्मकार, देशजोह तथा अमलानी दृष्टिकोण से मुक्त कर सकेगी ? धनिकों के साथ आत्मिक वर्ग और अव मध्यवर्ग भी देशदेशों व्यस्तत का शिकार हो रहा है परिशिष्ट स्वरूप यह सुंदर समाज एवं सुंदरतम मानव कुल, अर्शात्म एवं अस्वस्थ हो रहा है।

कविता का नारी विषयक अति आधुनिक एवं स्वस्थ दृष्टिकोण है। उन्होंने फैसला कि नारी शिक्षा की महता आज के समय को समझाने की जरूरत नहीं है, तथापि आज नारी को समाज में संवृत स्थान प्राप्त हुआ नहीं है। आज भी नारी को सामाजिक समानता का समानता प्राप्त नहीं हुआ है। यथापि कानूनी तौर पर यह समानता उसे मिल गई है परन्तु व्यवहार में और सामाजिक स्तर असमता आज भी नारी के प्रति स्वस्थ व्यवहार स्तर नहीं जा रहा। एक कर्तृत्व तथा नारी-शिक्षा का पैसीदा समाचार था। सिद्धांतों के लिए शिक्षा आकाश कुशलता ब्रह्म थी। अध्यात्मिक आयुक्त के अनुमत बाद कुछ ही वर्षों में नारी शिक्षा विषयक चरित्र होने लगी। नारी की प्रगति में उसके बने सामाजिक बेवजन सन 1930-31 में दांड़ी समाजक (नमक आंदोलन) के प्रारंभ के साथ हलके हुए।

19वे की तीन शताब्दी में मुलीनाथ भगवान नारीपुर में तीर्थकर हुए, यह ब्राह्मण धर्म में स्त्रियों की गई है। नारी भी मोक्ष की अधिकारिणी है - जैनदर्शन की यह मान्यता है। जैनदर्शन ने नारी की सामाजिक विषयका को ललचारा। यह कारण है कि चतुर्वीं संघ में शाखों को शाखाक जैसा ही महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

गुरुदेव वर्धिने कहा है, “महान जोतिषियों, संतों एवं महत्त्रों को जनर देख।” यदि मैं अपना होगा तो उसकी संतति भी ऐसी ही होगी। शिक्षा, संस्कृति तथा धम्मिनी माता अपनी संतति को संस्कृतीशील बनायेगी। “उन्होंने हमारी वैष्णविक विचारणा एवं नारी के प्रति संकुचित दृष्टिकोण को फटकारते हुए कहा,” हम लड़कियों के लिए नई-नई संस्थाएँ शुरू करें। और लाखों रुपया खर्च करें। और बेटी तो पसंदी है। पर-पार चली जायेगी ऐसा सोचकर बेटियों की मरहामत हम नहीं करते। ऐसा करते समय हम यह शूल जाते हैं कि बेटी तो गहनाधी है। कुलवीरिका है। बेटियों के लिए भी गुरुकृति, विश्वास एवं छात्रावास बनाने चाहिए। अपनी बेटियों भी शेरी कैसी सहायी एवं सत्यांग जैसी सुशीला बनने चाहिए। जाना तो दीपक है, आत्मकृत्व भी जान द्वारा ही होता है। अत: नारी को जान एवं आत्मकृत्व से चंचल नहीं स्वता चाहिए। इस युग में नारीशिक्ता अन्तनत आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है। यदि माता संस्कृति, शिक्षा, भावादृष्ट एवं निर्देश होगी तो उनकी संतति भी ऐसी ही होगी।”

गुरुदेव आत्मिक शिक्षा के पक्षधर थे। उनका कहना था कि युग बदल रहा है। विज्ञान के विकास से मानव-विकास के असंख्य द्वारा खुल गये है। विज्ञान में ज्ञान-विज्ञान की अनेक शाखाएं-प्रशासनिक खुल गई हैं। नई-नई खोजें हो रही है। जीवनशास्त्रों ने विस्तार विषय एवं दिव्य शक्तियों का उल्लेख किया है, आ वे रहस्यों के पर्यार्द में छिपे नहीं हैं। विज्ञान आदि में जीवन प्रभुगीत हो चुका है। पूर्व-जग्म के विषय में देश-विदेश में परा-गंगाविद्वानों ने अनेक अनुसंधान किया है और इसकी सत्यता

1. स्मारिकापावागड़ तीर्थ अंजन शलका - प्रतिष्ठा महोत्सव प. 13
प्रकट हुई हैं। भूगोल-व्यापारशास्त्रों की शोध के पहले हटा दिये हैं, अतः वर्तमान विज्ञान-युग में युवकों को आधुनिक शिक्षा प्रदान करना आवश्यक है। गुरुदेव ने कहा: ‘आज आधुनिक शिक्षा से लोग पवरते हैं और कहते हैं कि शिक्षा से संक्रमण का नाश होता है, परंतु मैं तो इसको न्रीं ही अर्थ मानता हूँ, जैसे कि विज्ञान जला देती है। इसलिए विज्ञान के उपयोग से दूर रहना चाहिए। इस तरह से वैज्ञानिक तथा आविष्कारक घराये होते तो यारे संसार में जननवाद का साधारण स्थापित नहीं कर पाते। लिस काल में लिस प्रकार की शिक्षा प्रचलित हो उसका प्राय किया जिना नवयुग पीढ़ी अपना हित नहीं साध सकती।’ गुरुदेव शिक्षा को कला का रूप मानते थे। उनकी दृष्टि में: ‘मूर्तिकार अनगढ़ कुरु पत्र को अपनी कला के मूर्ति का रूप प्रदान करता है। कलाकार की दृष्टि देखिए - जो अनगढ़ पत्र किसी को आर्किटेक्चर नहीं कर पाता, युवरत मूर्ति बनकर वह मन में व्यापी है, और ज्ञान में समाज का नहीं है। शिक्षा भी आदर्शतर कला है। इससे बालक रूपी अनगढ़ पत्र मानवता की मूर्ति बनकर सब्ज की आफ्तों में गम है।’

ख्यातनाता आदर्शलन के नेता ख्यातनाता भाषाय में ऐसे नागरिकों की कल्पना करते थे जो नैतिक और मानकीय मूल्यों के प्रति आस्था स्वतंत्र हो, जो स्थार्थ से उपर उठकर देश को प्रतिष्ठा, अभष्टता और उत्ति के लिए कार्य किये करेंगे। नवयुग-निर्माता आदर्शतर कल्पसुवृत्ति का यह हिस्ट्रियोग्राफ़ था।

पुरानी विचारधारा के कारण लोगों में यह भ्रम फैला हुआ था कि आधुनिक शिक्षा से बालक संस्कारशील होते हैं। गुरुदेव ने इसका खंडन करते हुए कहा: ‘शिक्षा की महत्व देना और उससे दूर रहना समाज की उत्ति में बाधा पहुँचाता है, इसलिए आधुनिक शिक्षा से न चर्चाते हुए, उसके लिए सुदर व्यवस्था करके आदर्श विधालयों और शिक्षक-प्रशिक्षण विधान अन्धकार करने चाहिए। शिक्षकों को भस्म-प्रोौण की चिन्ता से नुकर करके उनके द्वारा शिक्षा का प्रचार करना समाज को उत्ति के लिए लाभकारी है।

गुरुदेव ने आदर्श विधालयों की योजना समाज के साथ स्थीर, उन्हें उठाने आदर्श अध्यापकों की समानार्पणीय जीविका पर विशेष बल दिया। आदर्श अध्यापक को इसना मिलना चाहिए कि वह समाज में समानार्पणीय जीवन-यापन कर सके।

गुरुदेव की अभिलस्ता थी कि ‘जैन विध्वंशविधालय’ की स्थापना हो। उनके शब्द आज भी गुरहूँ रहे हैं: ‘शिक्षा की वृद्धि के लिए, ‘जैन विध्वंशविधालय’ नामक संस्था स्थापित हो, फलस्वरूप सभी शिक्षित, संस्कारशील हों और कोई मूर्ति से दुखी न रहें।’ इस घोषणा में दो हिस्ट्रियोग्राफ़ हैं: प्रथम सभी शिक्षित और संस्कारशील हों, इसमें शिक्षा को संस्कार से जोड़ दिया है। द्वितीय-कोई मूर्ति न हो, इसमें ज्ञान-उज्ञानवाली शिक्षा का उल्लेख है जो विधालय को स्वालमनी बनाती है। ‘जैन विध्वंशविधालय’ में जैनबनर्धन और अन्य दर्शनों की शिक्षा दी जाय। गुरुदेव ने अपने अनियम समय में बनाई में संस्कृती संप्रदाय के अन्तर्गत ये उद्देश्य प्रकट किये थे: 'आज इस महामय दिन में जैनसंप्रदाय से यह आशा स्वतंत्र है कि वह जितनी जल्दी हो सके, उसी जल्दी ‘जैन शाखासाठी’ कार्य करे।'

गुरुदेव का स्तुति साकार करने हेतु ‘श्री आलमवल्लभ जैन स्मारक शिक्षणस्थल, दिल्ली’ ने एक सुन्दर योजना बनाई है। इसके अन्तर्गत ‘श्री आलमवल्लभ संस्कृति मंदिर’ नामक संस्था स्थापित की गयी है। 'संस्कृति मंदिर' का विशाल परिसर दिल्ली से 30 किलोमीटर दूर दिल्ली-आमूतसर राष्ट्रीय राज पर स्थित है।
शिक्षा के क्षेत्र में गुरुदेव का महत्वपूर्ण कार्य है - प्राचीन हस्तलिखित व प्रकाशित ग्रंथों का संग्रहालय तथा स्थापित करना। उन्होंने अथवा प्रयोगों से ९५०० हस्तलिखित ६००० प्रकाशित ग्रंथों का संकलन किया। यह अमूर्त निधि भारत-विभाजन के समय गुजरातवाला (पाकिस्तान) में रह गई थी। सेठ कसरीमाल लालमाल के आयार पर तत्कालीन सचिव (पुनर्वास दिव्यांग) श्री धर्मनीर से प्रयास से यह भारत में लाया जा सकी और इस समय दिल्ली में सुरक्षित है। अपने सम्बन्ध और पाठ्य के जान-भंडार का भी उद्देश्य किया। जैसलमेर के जान-भंडार के उद्देश्य में आपका विशेष योगदान रहा। पाठ्य में अपने ‘जान-भंडार’ के लिए ऐसा प्रभावशाली उपदेश दिया कि बहिनें ने अपने सोने के कंगन भी दान में दे दिये।

उनके प्रयास से भारत के नगरों व ग्रामों में पुस्तकालय व बांचालिय पुलिले। पुस्तकालय जान के प्याऊँ हैं’ श्री गुरुदेव ने कहा।

जितनी भी संस्थाएँ उनके प्रयास से खुलीं, उनका नामकरण भगवान या उनके गुरुदेव श्रीमद् आलमाराजजी पर किया गया। अपने जीवनकाल में जनता के विशेष आयार पर भी उन्होंने अपना नाम नहीं फंसा। ऐसे युग-पुंज, युग-लिपि से सदा आहूते रहे, कमल के समान कीचड़ से निलित।

पूर्ववास वल्लभ गुरुदेव ने समाज को समुच्चता तथा विकासवी बनाने के लिए जो प्रदान किया वह अद्वितीय है। कार्यक्रम आचार्य श्रीमद् विजय जगन्नाथदर्शी राव साहब ने अपने दादा गुरुदेव को अंजित देते हुए सही फामासा है कि, “तत्कालीन शिक्षा क्षेत्र में सीधे हुए समाज को समय की गति का बोध करने के लिए क्रिया का जो श्रंखलादी दीर्घांचल आचार्य प्रवर्तक ने किया, सम्बन्ध में है कि ऐसी अन्य कोई शायद ही कर पाता है।” पूर्व वल्लभ ने समाज की सुप्रेर चेतना को जगाते हुए कहा, “उठो - आगे बढो, देखने नहीं कि किस प्रकार समय व्यतीत हो रहा है। आज सारा संबंध समय की गति के साथ विचार के चरण मिलाकर उठने के शिक्षा की ओर अभिमुख है तो फिर हमारा समाज ही क्या छोटी पड़े रहे हैं।” शिक्षा के अभाव में धर्मधार्म का मनोर्क, सत्यमात्र की पहचान असम्भव है। गुरु वल्लभ ने तत्कालीन अशिक्षा के घोर अंधकार को हटाने के लिए जगह-जगह सरस्वती मंदिर, गुरुकुल, आश्रम, पाठशाला, स्कूल, कॉलेज, छात्रालयकृत जान-डोश प्रचारित कराये। जिससे कृपियाँ, अंधविचार, अशक्ता, अज्ञान का तमसु चिलिय किया गया। “पूर्व गुरुदेव ने व्यवहारिक शिक्षण के साथ धार्मिक शिक्षण का सामर्थ्य स्थापित कर एक नयी समस्यात्मक शिक्षण पद्धति प्रचारित करवायी। इत्यादि वे अज्ञान-तिमिर-टरंगी कहलाए।”

“गुरुजीने कहा कि - ऐसा आदर्श विभागिन तो जिसमें जैनरसिय एवं अन्य दर्शनों का अध्ययन हो तथा मनुष्य अपने जीवन को प्रभुमंदिर बना सके उपरांत वह सुसंस्कारी बन कर देश और समाज की निःस्मृष सेवा भी कर सके। यह सिद्ध और आदर्श कल्याण नहीं है। वत्तख पद्यत विचार का धरातल है।”

पूर्ववास आचार्य वल्लभगुरुदेव ने समाजजीवन और कल्याण के लिए जो दिशानिर्देश किया था,

1. श्रीदामशुमन लेख - आचार्य विजय जगन्नाथदर्शी राव साहब पृ. ५।  
2. गुरुवल्लभ की दीपिका शातांद्री और हमारा कल्याण - नित्यकुंज पृ. ८।  
3. आचार्य विजय निलामन्दर्शी पृ. ६।
उद्देशित किया था वह सदा अवस्मृत रहेंगा। समाज उनके ऋण से उत्तरण नहीं हो सकने। उनका सामाजिक दस्तकारण अन्य तत्कालीन आचार्यों से अलग था। उन्होंने महसूस किया था कि कन्याविधृपण, वरविधृपण तथा अन्य अनेक सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक रूढ़ियों में समाज पिपा जा रहा था। इन रूढ़ियों, असंस्कृति तथा वहाँ 'से समाज, धर्म एवं संस्कृति को कोई लाभ नहीं है। शायद यही कमजोरी विदेशियों को हर मूलाम बनाने खर्चने के लिए प्रेरित करती हो। इन सामाजिक विपरीतताओं के कारण समाज खोलका होर हा रहा है। अतः कुछ करना चाहिए। फलतः उन्होंने समाज को न्याय आधार का आयाम दिया, समाज का हाथ पकड़ा, उसमें नवीन चेतना का प्राण पूँजा और उन्हें मस्तक जीते तथा गौरवपूर्ण जीते का मार्ग दिखाया।

वल्लभ गुरु का समय भी एक तरह से तनात्ते का युग था। देश एवं समाज में नवचेतना और नवजागरण का युग था। देश भी अंग्रेज़ों की दासता के बंधनों से छुटकरे के लिए छटपट रहा था।

राजमहामोहन राय एक भूतपूर्वोदक, दश्यांत सरस्वती का आर्यसंघ, स्वभावी विचेकांड का समुद्रकण मिशन तथा एनीसेंट की ध्यानों किककाल सोसाइटी आदि नवी सामाजिक चेतना के प्रसार में लगे थे।

आचार्य विजयवल्लभ का सामाजिक दस्तकारण सुधारवादी था। वे एक ऐसे समाज की स्थान करना चाहते थे, जिसमें समाज में कोई नियम न रहे और कोई शूरुआत न हो। समाज में कोई अंप्रे के न रहे। नैतिक और साधारण का पालन हो। प्रथम सब एक होकर रहे, सीहारे बनाये रहे। जैनधर्म एवं दर्शन से सुपरिचित हो और देश-विदेश में प्रचार-प्रसार करे। इस प्रकार वे समाज को समृद्ध, शिक्षित, धर्मशील, गौरवपूर्ण और चेतनामय स्वयं पनना चाहते थे।

“आचार्य वल्लभगुरु ने शिक्षा, सेवा, संगठन, आधिप्राचार्य एवं स्वास्थ्य को संसारमय जीतने के लिए जो रांच साधन बनाये, वे आज भी प्रासंगिक है।”

गुरुदेव वल्लभ ने अपने प्रमुख विहारक्षेत्र - पंजाब, रजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश आदि प्रान्तों में अपनी शक्ति लगायी। जिसकी आवश्यकता थी उसे पूरा किया। पंजाब में गुरुजन जीन को रियासत प्रदान की, रजस्थान में शिक्षा का प्रचार-प्रसार किया, गुजरात में संस्कृति के लिए प्रयास किया, महाराष्ट्र के मुंबई क्षेत्र में महावीर जैन विधालय की स्थापना करवाई, जिसकी आँठ शाखाओं सिद्धांत में प्रवृत है।

गुरुदेव ने प्राणीमात्र की सेवा के साथ मध्यवर्धमान एवं सर्वहारा साधारणों की सेवा पर विशेष बल दिया। वहें वह साधारणों में सांस्कृति (संध्यासंध्या) को उन्होंने निर्माण करने की चिंता को टाल सकता है, शेष समय के लिए क्या? इसलिए साधारण बौद्ध विधा को दुखमुक्त करने तथा समाज की इतिहास देने हेतु पारस प्रारंभ जीते को लक्ष्य के सात विद्यमान के लिए प्रेरित किया।

आचार्य विजयबल्लभसर ने कहा कि समाज की नींव को जबतूल मनोरता हो तो शुद्धावरण द्वारा मन को मंदिर के समाज पवित्र करना। पवित्र मनमोहन में ही पसंद, क्रूपकाल प्रवतिता विज्ञान होगी। मन को पवित्र बनाने के लिए शुद्ध आधारों शुद्ध विधार और शुद्ध विपरीत की आवश्यकता है।

महात्मा गांधी के विचारों में प्रभावित वल्लभ गुरुदेव ने ऐतिहासिक के लिए विलायती चर्चा को छोड़ आदिीवक्ता को न केवल अपनाया बल्कि अपने समुदाय के सभी साधु-साध्वीजी भगवानों को।

1. विजय वल्लभ के फिल्म प्रचार के अनुसार - मुस्तफाज़ नवीनचंद्र विजयको। पु. ३५
खादी कस्ट धारण करने की प्रेरणा दी। उन्होंने खादी एवं राष्ट्रप्रेम को अहिंसाधर्म से जोड़ते हुए कहा कि - खादी अहिंसक वस्त्र है जबकि रेशम हिंसक वस्त्र है। उन्होंने आजीवन खादी धारण की थी तथा उसके प्रचार के लिए उपदेश भी दिया। उन्होंने आचार्यस्वामीजी जैसे महत्व प्रसंग पर भी नवमार्गमंत्र से मंचित पान खादी की चादर ओढ़ी थी। उन्होंने खादी की आध्यात्मिक धार्मिकता करते हुए कहा - "खादी प्राणीमात्रा और मानवता की पोषिता है। विदेशी वस्त्रों में चर्चा का उपयोग होता है, उसके लिए असंख्य असहाय, पशुओं का व्य क होता है, इसलिए वह व्यर्थ है। खादी से मानव का पालन पोषण होता है। अतः खादी पहनना अहिंसा का पालन करना है। यह प्रभु-पूजा का ही एक अंग है।"

गुरु वल्लभ ने खबरदार वस्त्रों को अपनाने तथा विदेशी वस्त्रों के विद्वान का उपदेश दिया है। इसका रहस्य यह है कि खबरदार अपनाकर ही राष्ट्र की कला, संस्कृति और सभ्यता को जीवित रखा जा सकता है। कला और संस्कृति के चिन्हों से ही देश समृद्ध और महान बनेगा।

"विदेशी ताकतों से धर
बचाकर रखना है हमको,
वतन की एकता को भी
बचारे रखना है हमको।"

इस प्रकार उन्होंने खबरदार वस्त्रों के प्रति अहिंसाधर्म, प्रगतिक रूप से और बात इस उदाहरण से भिन्न हो जाती है, एक्सी भी - नेहरू से गुरुजी की भेंट हुआ। उन्होंने गुरुप्रेम और स्वतंत्रता की बात कही तो गुरुस्वामी ने कहा, "आप देश से इतना प्रेम करते हैं और राष्ट्र को स्वतंत्र देखना चाहते हैं तो अपने विदेशी सिपाही कार्यों पीटें हैं। यह सून तक्काल ही उन्होंने सिपाही को फेंकते हुए विदेशी वस्त्रों का तथा व्यर्थ का व्यर्थ किया।"

पूरे गुरुप्रेम ने नवजुकामो को प्रेरित करते हुए कहा, "अपना चरित्र विकसित करो, राष्ट्र के सुनामिक बनो। राष्ट्र और समाज तुम्हें आशा देता से देख रहा है। देशप्रेम, मानवता, प्राणीमात्रा के लिए मैं किसी भी संघर्ष से हुए अच्छे कामों की सुरक्षा का मजबूर हूँ।"

प्रज्वल राष्ट्रीय गुरुप्रेम राष्ट्र के उद्यम को लेकर चिंतित है। इसके लिए उन्होंने, "सादा जीवन उच्चविचार" के मंत्र को मानता प्रदान करते हुए कहा, "हमारे राष्ट्र का उद्यम। सादा जीवन उच्चविचार से हुआ था। लेकिन अब अनेक व्यस्तों में फंसा जाने के कारण चिल्लापदा, आलस्य, दरियात, फैशन एवं चार्चीहता आदि अब वापस में जाने का पतन हो रहा है। जब तक ये बुरानी गृह नहीं होती तब तक राष्ट्र का उद्यम नहीं होगा।" इस प्रकार उन्होंने सादा जीवन उच्चविचार की महत्ता की प्रतिष्ठा की है।

देश की स्वतंत्रता विषयक चिएत करते हुए गृहूं गृहनेत्रे देशवासियों की एकता पर जोर दिया है। "भारत की आजादी तभी सिद्ध हो सकती है जब हिंदू, मुसलमान, सिख आदि एक होकर रहे। हमें बलिदान देकर भी अपनी एकता को कायम रखना होगा। हम सब भारत में उपजन होने के नाते भारतीय हैं, एक हैं। हम सवया मानव और भारतीय बनना है।"

श्री विजयचंद्रसुरे ने "यह यथा में एक संप्रदाय विशेष का आचार्य हूँ पर यदि हम वास्तव में
सारे विश्व में सत्य तथा अहिंसा के द्वारा शांति स्थापित करना चाहते हैं तो हमें साम्राज्यकर्ता को गौर करते हुए मानवता की दृष्टि से सोचना पड़ेगा। विश्वशांति के लिए हमें अपने संक्षिप्त समर्थकार्यों विचारों को तिलांकित देनी होगी साथ ही हमें यह सोचना होगा कि विश्वशांति किन धोष उपयोग द्वारा स्थापित हो सकती है? उस समय हमें यह नहीं सोचना है कि हम जैन हैं, बौद्ध हैं, मुस्लिम हैं, पासी हैं अथवा ईसाई हैं। उस समय केवल हमें यह सोचना है कि हम मानव हैं और मानवता हमारा मूलधर्म है और मानव की शांति ही हमारा परम उद्देश्य है, तभी जाकर चिरस्थायी विश्वशांति स्थापित हो सकती है।”

सार्वजनिक में श्रीमद वचनमुखसृजि का काव्य मानववाद, मानवता के वर्णन व्यवस्था मानव-समाज की परिप्रेरणा की है। उन्होंने स्वतंत्र मानव - समाज के लिए व्यवस्था मानव-मानव संबंध की परिकल्पना की है। उन्होंने प्रदूषण की वितारणलीला से बचने के लिए वर्णन और जीव-शुद्धि के संबंध का संदेश दिया है। उन्होंने सामाजिक विपत्ति को दूर करने के लिए भोग को नकारा है तथा त्याग की प्रतिष्ठा की है।

भारतीय संस्कृति का में धृष्ट त्याग है, भोग नहीं। परस्पर वृद्धि के माध्यम से संसार को महत्त्व संदेश दिया है।

विषयान्तरिक दायित्व -

श्रीमद्वचनमुखसृजि समाजवादी कवि हैं। उन्होंने अपने अनेकाने दुःख से धर्म-धर्म के बीच, मानव-मानव के बीच, सम्राज्य-सम्राज्य के बीच एवं राष्ट्र-राष्ट्र के बीच एकता स्थापित करने का संदेश दिया। उन्होंने राम-रीढ़ी, जिन्देश्र और कृष, बुद्ध और बीतसंग को एक ही ईंधन के विधिनाम नाम बताकर धर्म-दुर्बलता के प्रकार किया।

उन्होंने कर्म की प्रगतिकाता बताकर जाति और वर्ण की उच्चता और गतिकाता को मिटा दिया। ‘श्री एकादश गणधर पूजा’ काव्य में भगवान महावीर, गणधर सुधरितवामी को कहते हैं कि ‘मनुष्य को मनुष्य-जन्म संवर्ता, उदात्त आदि सड़कामों से मिलता है और मायादि दुस्सूल्यों से पशु आदि योनियों में जन्म लेना पड़ता है’। कविश्री ने यह समाज घर-घर केलाया। इस प्रकार उन्होंने विविध जातियों को समन्वय-सुन्दर में बींच लिया।

कविश्री ने प्राप्तिवात में नामप्राप्त प्रदर्शित कर समस्त सूची के एकको प्रतिष्ठित किया। उन्होंने बताया है कि प्रेम और मांसीह जगत के समन्वय-सुन्दर है।

गुरुदेव ने भारतीय संस्कृति को समन्वय-संस्कृति कहा है। उनके अनुसार लोकव जीवन का अलौकिक जीवन से समन्वित करने से शान्त शुद्ध की प्राप्ति होती है। लोकव और अलौकिक जीवन का समन्वय-सुन्दर है – दात। उन्होंने अपने महाकाव्यों में दात की अपरिहित दिव्यता का वर्णन किया है। महाकाव्यों के समस्त नायक अपने विचार राजनीति के लिए से पूर्ण वर्णीकरण ग्रहण करते हैं और जगत के कल्याण के लिए मुक्ति के मंगल-मार्ग में प्राप्ति करते हैं। दीक्षा लेने के बाद वे प्राप्तिवात के कल्याण के लिए अपना जीवन-दात कर देते हैं। अपनी उच्चतम साधना से परम ज्ञान प्राप्त कर वे प्राप्तिवात को
ज्ञान-दान से उपकृत करते हैं।

कविश्री ने सैद्धांतिक और व्यावहारिक जीवन के समन्वय पर विशेष ध्यान दिया है। उन्होंने बताया है कि कोई सिद्धान्तों की तात्कालिक समझदारी नहीं हो सकती। सिद्धान्तों के अनुप्रयोग जीवन का ठीक़ता यह उनका सपना है। जगत का कल्याण सिद्धान्त और व्यवहार के समन्वय मान्य-जीवन पर निर्भर है।

उन्होंने ज्ञान, भक्ति और कर्म का समन्वय किया है। उन्होंने स्पष्ट रूप से बताया है कि कोई ज्ञान 'श्रूप-पाद' है।

श्री वल्लभ सूर्यसिद्धि ने साधना और साध्य के समन्वय पर ध्यान दिया है। उन्होंने वैष्णवधर्म के ज्ञान, भक्ति और कर्म का जीनवर्तन के 'रत्न-त्रय' -- सम्प्रज्ञान-सर्वभाव-चारित्र में समन्वय किया। उन्होंने सूचि-मंगल हेतु समन्वय-धूर्त (अनेकता-धूर्त) अपनाने का सपना दिया है।

कविश्री ने प्रभुता और लघुता, वैष्णवीलता और अर्किचनता का समन्वय किया है। उन्होंने बताया है कि महापुरुषों की लघुता में प्रभुता का भाग होता है, उनका वैष्णव अर्किचनता के चिन्तापत्र में शोभित होता है। 'श्री आदिदिन चैत्रिन' के पात्र धन साधवी अपने आप के वैष्णव में भी जनता की सेवा करने का प्रत्येक अपनी लघुता प्रकट करते हैं। अतिरिक्त से दुखी-पीड़ित प्राणियों की सेवा करते हुए वे अपने श्रीदल के रूप में लघुता और लघुता तथा विनम्र सेवक के समान दुखी जीवित की सहायता करते हैं।

इसी महाकाव्य के श्रीराम जीवान्न हर धनिकपृथ्वी तथा हथाद्वं वर्णकृ रूप की सेवा में तपस्या हो जाते हैं। 'श्री शालिकांत चैत्रिन' के राजेन्द्र मेघस्थ का व्यक्तिव्रत प्रभुता और लघुता का समन्वय है। 'श्री महावीर चैत्रिन' के भववान महावीर आजात प्रदेश के आजतारी जनों को अहिंसा और प्रेम सिद्धान्त के लिए पैदल चिह्न करते हैं। विवेकशुद्ध अजाती मनुष्य यथाप्रकार उनको घोर कष्ट देते हैं, पर करून्रसागर अत्यन्त प्रशांत भाव से उनके कल्याण की कामना करते हैं। वे अविश्वास घिरा शक्ति से सम्पदा होने पर भी लघुता और अर्किचन होकर उन अजात प्रदेशों में लोकमंगल भावना से चिह्न करते हैं। उनकी महान्तता और लघुता का यह विनिमय समन्वय उदात्त मानवता का धोखा है।

भारतीय संस्कृति में स्थितप्रत्यक्ष का विशेष महिमा बनाई गई है। श्री वल्लभसूर्यसिद्धि के धीरोगदाता और धीर प्रशान्त नायक स्थितप्रत्यक्ष वे मेरे होरी के समान विराट और सृजकृ न्तर के समान अर्किचन हैं। उनकी महान्तता और लघुता का अद्भुत समन्वय जगत-कल्याण का आधार है।

कविश्री ने अपने काव्य में विविध भाषाओं का, रगों का तथा छंदों का अनुपम किया है। उन्होंने शास्त्रीय श्रापों और लोक-लाइनियों का अपने काव्य में समन्वय किया है। उन्होंने उर्दू की गजल और कवाली में अपने पथ को निबंध किया है। इतना ही नहीं, उन्होंने संस्कृत-पथ गीतों में भी गजल और कवाली का समन्वय किया है।

संकेत में श्री वल्लभसूर्यसिद्धि की चित्तवन में समन्वय और एकता का अजत्रा जल अंश छोटे-छोटे झांसों, स्तरों और उपरांतवर्ण से मिलकर एक महाशामा बनता है। उनके काव्य की महाशामा समन्वय के सभी फूलों को सीलिंग, उन्हें चौपीकर गले लगाती, अपनाती, दुलाती उस विकास सागर की ओर जाती है जहाँ सीमाएँ बिलिंग हो जाती है और आनंदसागर की प्रशांत लहरें मानव को नित्यान्न में ममता करती हैं।
हिंदी सेवी संत ?

भाषा अभिव्यक्ति का माध्यम है जिस प्रकार गृंगे ब्यक्ति को गुडका स्वाद चखाया जाए और उसकी मिठास के बारे में पूछा जाए तो वह बता नहीं कर सकता। वह अपने आप को लाचार, बेहस और मजबूर समझ लेगा। यदि उसके पास भाषा का माध्यम हो जो वह अपनी बात सार्वजनिकता से कह सकेगा।

अनेक भाषा-भाषी लोग जहाँ रहते हैं, ऐसे देश में एक भाषा का होना अति जरूरी है परंतु प्रश्न है कि भाषा कौन सी हो सकती है जो लिखने बोलने, समझने में सही हो, जिसका उपयोग ज्यादातर लोग कर सकेंगे, जिसमें राष्ट्रीय एकता की शक्ति हो तथा संस्कृति का जतन कर सकती हो।

हिंदी ही एक ऐसी भाषा है जो सर्वगुणों से भिंड़त है इसलिए उसे राष्ट्रभाषा का गौरव मिला तथा जिसे गंगा के समान पवित्र बताया गया।

"हिंदी थे महान है, निराली इसी की शान है
स्वतंत्र है वसुधारा, स्वतंत्र आसाम है।"

हिंदी केवल एक भाषा नहीं है अपने हिंदी भारत की प्राण-शक्ति है, जिसमें हमारी संस्कृति, जीवन-प्रवाह और इतिहास की गूंज समापी हुई है।

हिंदी हम सबको जोड़ने वाला सूत्र है, हिंदी हम सबको एक परेलू हिंदुस्तानी महाल की उम्मीद से जोड़कर सहज मनुष्य, प्रेममय मानव बने रहने का माध्यम है, पर हिंदी की उपेक्षा से धीरे-धीरे भारतीय संस्कृतियों की जड़ भी कटती जा रही हैं। ऐसी अवस्था में यदि प्रान्तीयता, श्रेणीयता और अलगाववाद पनपते लगे, समकालीन और वैकल्पिक सिद्धांतों एवं आदरों में दसरे पढ़ जाएं तो यह कई अस्वाभाविक नहीं है।

अतता का स्नेह तथा सन्तों एवं साहित्यिकारों के आशीर्वाद का ही सुप्रियाम था कि हिंदी चौहराष्ट्री शताब्दी से ही देश की जनप्रिय भाषा ही। अमीर खुस्रो ने चौहराष्ट्री शताब्दी में ही हिंदी में पहलियाँ और पद लिखे थे। विभाषित की भाषा ब्रज से लेकर आसाम तक सर्वत्र समझी जाती थी। महाराष्ट्र में शिवाजी हिंदी कवियों का समाज करते थे। गुजरात के कच्चर महाराज गुजराती-मदद के साथ हिंदी भाषा में कितने भक्त रचते थे। रामानुजाचार्य, वल्लभाचार्य, निम्नाकार तथा मध्याचार्य के भक्त-आदोलन को बल देने वाले जो सन्त कवि दक्षिण से उत्तर की ओर आये, उन्होंने भी इसी क्षेत्र की भाषा में रचनाएं की। जानेकर, नामदेव, एकनाथ, समर्थ गुरु रामदास आदि अनेक सन्त कवियों ने मराठी के साथ हिंदी में काय मर्यादा की। हिंदी - सेवा की परम्परा का निर्वाह माध्यम रहे, लक्ष्मणगारण गद्रे, गजानन माधव, कलेकर, चिन्द्र भारत, अनंत गोपाल शेखर, प्रभाकर माले आदि मराठी भाषा-भाषी आधुनिक विलोक्तिकारों द्वारा निधि एवं लगते के साथ किया जा रहा है। इसी प्रकार गुजरात में नरसिंह मेहता, अखरा भगत, फोर्ट विलियम में हिंदी का रूप संवारने वालों में लल्लूलाल, दुनानाई कान एवं इंदु बसावडा की हिंदी-सेवा के महत्व को विस्मरण कैसे किया जा सकता।
है ? स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी, सरदार बल्लभ भाई पटेल, मोरास्वामी देसाई, इन सभी ने राजनीतिक स्तर पर भी हिंदी को ही देश की सम्पूर्ण भाषा बनाए रखने तथा उसे राष्ट्रभाषा के गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित करने का समर्थन किया है। तेलुगुभाषा शिवचंद शास्त्री की हिंदी-रचनाओं सरस्वती में प्रकाशित होती थी। इन्होंने "हिंदी-तेलुगु कोश" की रचना की है। गांधीजी रेणु, पाण्डुरंग राव, हमलता दासैनी, जी.सुदर रेणु, कामाक्षी गांधी आदि साहित्यकार हिंदी साहित्य को अपनी रचनाओं से समृद्ध कर रहे हैं।

हिंदी साहित्य में विशिष्ट योगदान ?-

श्री बल्लभसुरिर ने अपने काय्य को सुपृवार और सजीवता प्रदान करके सुंदर एवं सुचारूम में पाठों के सज्जन प्रस्तुत किया है, उन्होंने कहा कि भाषा ऐसा उपकरण है जिसके द्वारा सच्चाई की अभिव्यक्ति की जा सकती है।

श्री बल्लभसुरी का अध्ययन बड़ा व्यापक था इसलिए वे अपनी भाषा को अनेक तरह से प्रस्तुत करते थे अर्थात् उनकी प्रस्तुति की कला अति चुटकुली थी। उनकी भाषा काव्य के गुणों से सम्पूर्ण थी। भाषा के द्वारा ही भविष्य की कल्पना की तथा वर्तमान को मुदाता तथा भूतकाल के संस्कारों को जीवित रखा।

गुरु बल्लभ हिंदीतर प्रदेश में जने, पलने थे तथापि "वे राष्ट्रभाषा हिंदी से बड़ा प्रेम रखते थे।" उनके हिंदी प्रेम की परमाशा यह है कि उन्होंने सुन्दर वीक्षा पर्याय में मात्र एक ही बार गुजराती भाषा में बोला और वह भी गुजरात के कुलविलास श्रेणी में जैसे मंदिर की प्रतिमा के दीवार। इसके अंतर्गत उन्होंने हिंदी को ही अपनी भाषाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया।

संत कवि श्री बल्लभसुरीजी ने भारतेंदु युग में हिंदी में "जिनका निवारण" का प्रारूप किया। उन्होंने "श्री निम्नानंद प्रकारी पूरा" काव्य में हिंदी की प्रशिक्षित करते हुए कहा:

"जनितित कारणे, गायोली हिंदी भाषा भाषी प्रचार।"

श्री बल्लभसुरी ने राष्ट्रभाषा हिंदी की श्रीरूढि के लिए उसके शब्द भंडार को समृद्ध किया।

श्री बल्लभसुरी की भाषा का विशाल शब्दभंडार ?-

श्रीमद्विजयबल्लभसुरी की भाषा भारतीय जनता की कंठहार समान है। वे विविध भाषाओं के जानकारे थे इसलिए विविध भाषाओं का प्रयोग करने उन्होंने किया। जैसे गुजराती मराठी पंजाबी, उर्दू, फारसी, अंग्रेजी आदि भाषाओं के शब्दों का प्रयोग किया।

गुजरात की धरा पर जनम लैनेवाले इस संत ने अपने काव्यों में गुजराती शब्दों का प्रयोग करके अपनी रचना को स्पष्ट भारतवाणी जैसे - नाणु (धन) ताणु (शूष्ण अवकार) फानस (कंठी) चित्रामण (चित्रकं) केम (केम) धंड (स्तम्भ) आदि शब्दों के प्रयोग से अपनी रचनाओं को लोचक बनाया।

पंजाब की धरा के पाठक लैनेवाले संत श्री बल्लभसुरी ने अपनी रचनाओं में पंजाबी शब्दों का प्रयोग किया।

राजस्थान में भी वे चूमे फिरे थे, इसलिए उन्होंने अपनी रचनाओं में राजस्थानी शब्दों का प्रयोग
किया। जेज (देरी) थारा (तुम्हारा) महारो (मेरा) आदि शब्दों का प्रयोग किया।

श्री विजयवल्लभसूरि की वरीयता की तरह ध्मकडी कवि थे, इसलिए वे विविध प्रांतों में पूरे थे।

उन्होंने अपनी रचनाओं में कई मराठी शब्दों का भी प्रयोग किया है। देवल (देवलवल्लभ) तुम्हारा आदि

इसके साथ - साथ उन्हें शंव चंद्र (प्रसंग) कारागाम (उपयोगी) नूर (सौन्दर्य) दिखाई देते हैं।

अंग्रेजी शब्दों का भी बेशुभार प्रयोग किया, जैसे - केमेग्रा, डिओरी, नाइट्रो लीडर शब्दों का प्रयोग

किया।

फारसी शब्दों के प्रयोग से उनकी रचनाओं में चार चांद लगे अलालक (अलंकारमय), आमद

(उपयोगी) जांबूनद (सोना) ब्रज और अवथि के शब्दों का प्रयोग। "केरा (का), जिम, टिम, सम आदि

प्राकृत शब्दावली: र्ण, लिथुआन (तीन लोक), वर्णकाय (वनस्पतिक) आदि।

संस्कृत तत्सम शब्दावली: (व्यर्थ), परमाज (ညर), तिरस्थ (शुद्ध), चरमहत्त (मशक),

शंभूलग (तीन), श्रमराज (भष्य), श्रमर (श्रम पूर्ण) हमला के शब्द का मौलिक प्रयोग ही कलात्मकता बढाता है।

इस प्रकार वल्लभसूरि ने विविध भाषाओं के प्रयोग से रचनाओं में चार चांद लगाए हैं। हिन्दी साहित्य में जिस प्रकार भीसा, तुससी, सूर मैथली, जयशंकर

प्रसाद, सुर्यकांत तिपाठिक, निकाला अमर है उसी तरह श्री विजयवल्लभसूरि का नाम भी इतिहास में

अलंकृत है।

श्री वल्लभसूरि ने विविध भाषाओं के प्रयोग से अनेकता में एकता स्थापित की तथा लोगों को

एक माला पृथ्वी में बूंद चढ़ा और अविश्वास कर दिया कि साक्षरता हिन्दी एकता और अवंटनता की भाषा है।

हिन्दी के सम्मान में यह भाषाविशेष्य हमें अंदाज नहीं की जा सकती।

"इसकी जान पर अगर जो कोई बात आ भड़े

इसके सामने जो जुल्म के पहाड़ हो खड़े,

शजु सब जहान हो विरूढ़ विधि विधाता हो

मुकाल्ला करँगे जब तक जान में ये जान है।"

नाठवान स्नातक के लिए कवि ने शब्दों को लचीला भी बनाया है, उदाहरण —

(1) फल से बाल रंग भरते।
(2) कारों किरणा न आवे मग्निया। (मग्नत - घमण शायला कुण)
(3) जिनके चरण को, पूजा भावोदि कस्तमन। जनम - भरण दुय धर्मन नान।
(4) कियों निज रूप गंगवयो। (मंडड शब्द का लचीला कुण)
(5) मन्दिर हेम जशद्वरा, पूजत अति हर्षद। (जशद्वरा - जशद जश, हर्षद - हर्षित)
(6) गुजारिश से धर्मारा।
(7) आये नाम यह कथन करद, हिंद शिशु हम स्थान लहंद।

नवीन शब्द - रचना ?-

कवि ने अनेक नवीन शब्दों को रचकर हिन्दी की श्रीनगर्दी की है। जैसे - निर्जसपति (इडेर),

शंभील (तीन की संख्या), कमल-श्वामी (प्रत्यय), चरमहत्त (मशक), कमार (अज्ञातक) के शत्रु अर्थतः
अहिल भगवान) आदि।

करवे अन्य भाषाओं के तत्सम शब्द इस प्रकार प्रयुक्त किये हैं कि उनका अर्थ सहज ही प्रकट हो जाता है। उदाहरण —

(1) दिवस री० नहीं चैन धरन। (र० - रात्रि - नज़र)
(2) बंदन करिये प्रभु को दोनाँ कर जोड़।
दिल में घरिये प्रभु की हसदम लोड। (लौं - ध्यान - राजस्थानी)
(3) तारणतरण विदुष है दादा। (दादा - तुकारा - राजस्थानी)
(4) रीति अनुभव तरवानी। (तरवानी - तरने के लिए - जूराती)
(5) शांतवनकास देश के, मुद मन गुंजे भ्रम समान। (वनकाज - मुख कमल - संकृत)
(6) नमोतु नाथ तुमरे ही, नति तुमको हमारी है। (नमोतु, नति - नमस्कार - संकृत)
(7) खुदा से नहीं है जुदाई। (खुदा, जुदाई - उड़)
(8) पासस लोहा फरसे, जाउँव खोइ। (जाउँव - सोना - फरसी)
(9) ‘रजत गणि कलधीत रघु से, कोष भरे हरी सारा।’ (रघु - रल - प्रकृत)
(10) ‘कलदार जंगली, कलदार नाइट, कलदार फीडर।’ (अंग्रेजी शब्दावली)

श्री वल्लभभूदरी ने भारतीय एवं अन्य भाषाओं के शब्दों को सहज रूप में अपनाकर हिंदी का अन्य भाषाओं के साथ सोहार्द बढ़ाया है।

आज हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में लोकप्रिय बनाने के लिए ‘वल्लभ हिंदी’ की आवश्यकता है। निःसंदेह, हिंदी का सबसे बड़ा शत्रु वह है जो इसे शरि हिंदुओं की भाषा मानता है। हिंदी नाथों, सिद्धों से लेकर कवीर, नानक, जायसी, मीरा, रहीम, रसहान, वांनादाय, बनासीदास, आनन्द, यशोविनय, विनायकन्नूरी, बल्लभभूदरी, भास्तेतु, महादीप्रसाद दिनेशवरी, प्रेमचंद, जयकाँड ‘प्रसाद’, निस्सारा, महादेवी, मुक्तीवाद, मानानीं आदि महाप्रचार लोगों की देन है। वह बांद्र, हिंदू, सिंह, जैन, मुसलमान, पारसी, सभी की भाषा है।

हिंदी अन्य भाषाओं की मानतालू बनाने है। वह समस्त भारतीय भाषाओं को गले लगाकर राष्ट्र को एकता के सूत्र में बौद्धने के लिए कठिन है। हिंदी-प्रेनियों को श्रीमद वल्लभभूदरी का दिशा और व्याख्याताक इतिहास का अपनाकर उसे लोकप्रिय बनाता चाहिए, जिससे किसी भी प्राचीन श्रीस्ती को, चाहे उसकी भाषा तमिल हो या बंगाली हो, कठर हो या तेलुगु हो, हिंदी के प्रति ध्यान न हो।

अपनी भाषा के बौद्धक न तो स्वयं ध्यान समर्पण और न झाँक-झाँकने के किसी भी क्षेत्र में मौलिक योगदान किया जा सकता है। हाँ, नकल जहर हो सकती है, पर उससे तो पूरा देश हमेशा पिछड़ रहेगा। भारत में भास्तेतु ने ‘निज भाषा उत्सव’ अंत: सब उत्सव को मूर्त’ कहा और वल्लभभूदरी ने हिंदी को ‘जिनस्वायमी भाषी’ कहा तो उन्होंने पराइ भाषा अर्थात विदेशों भाषा से होने वाले खतरों से सावधान किया है।

रुप में ४५ भाषाओं बोली जाती है, लेकिन राष्ट्रभाषा रुपी है। चीन और जापान में भी अपनी राष्ट्रभाषाएँ हैं। राष्ट्र को एकता के सूत्र में बौद्धने की शक्ति राष्ट्रभाषा में है।

स्पष्ट है कि भारत राष्ट्र भाषा हिंदी के एक सूत्र में बौद्धक निरन्तर रूप से अख़बार होगा और
हर श्रेणी में सुजनशील होगा।

आज हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में लोकशिक्षित बनाने के लिए बल्लभगृहैत्तिक की आवश्यकता है। निःसंदेह हिंदी का सबसे बड़ा शुद्ध वह है जो सिर्फ हिंदुओं की भाषा मानता है। हिंदी सिद्धांतों से लेकर कबीर, नानक जाप्सी, मीरा, श्रीम, सरस्वती, आनदवर्धन, शिवमहेश्वर, भारतेन्दु, डिवीदी, महावीर प्रसाद, प्रेमचंद, प्रसाद, निवाला, मागमाजुन तथा बल्लभगृहित्तिक आदि महामाय लोगों की देन है। यह बीच भी, भिन्न, मैथुन, मुसलमान, पासी, क्रिस्तियाँ सभी की भाषा है।

इस प्रकार विजयवल्लभ महादेव भाषा के द्वारा राष्ट्रीय एकता तथा जातिव्यक्ति एवं भारतीय सम्पत्ति और संस्कृति का प्रचार-प्रसार किया है।

निष्कर्ष:-

जिस प्रकार गंगा का जल पचत है उसी प्रकार हिंदी भाषा की गंगा है क्योंकि वह एकता, अवश्यकता और प्रेम की भाषा है, जिसके द्वारा देश की समस्याओं का हल किया जा सकता है।

आचार्य विजयवल्लभ सरस्वती भागवत महाकाव्य कथा, कुल शिवमहेश्वर सूरदास, तुलसीदास, कबीरदास, मलिक महमद जाप्सी की तरह लोकभाषा में वीतकथा देने के उपदेश, समाजवादी, भारतीय सम्पत्ति, संस्कृति, उत्तर प्रस्तावना निवाला, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रप्रेम, नारी का सम्बन्ध, शिक्षा के प्रसार एवं धर्म की बात ऐसे समय मायाम पर कहीं, जिसमें राष्ट्रभाषा ही नहीं विश्वभाषा बनने की सारी सम्बन्धायाँ है।

चूँकि उनका कार्यक्षेत्र गुजरात, महाराष्ट्र, राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, पंजाब तथा जमशेदपुर आलम काश्मीर एवं दक्षिणी भारत रहा है। उन्होंने अपनी बात कहने के लिए हिंदी का प्रयोग किया। हो सकता है, उनकी हिंदीवाणी सुविधा सही अर्थात कस्तुरी पर पार न उठे तथापि लोल हद में बैठनेवाली भावसागर, हार्सार एवं सार्थक अवस्था है। हिंदी संसार उनके इस प्रदान को हमेशा याद रखेगा। अतः हिंदी साहित्य के इतिहासकार क्रमें उनका प्रदान उपेक्षित रहा हो, लेकिन वह आ गया है कि इसके प्रदान को साहित्य के इतिहास में पौराणिक रूप से देखा उनका भोज्यांकित किया जाय।

हिंदी के समूह साहित्य ने ही एकता बीज बोना तथा उसके पदब्रह्म की छाया में भारतीय जनता अपने आपको सुपक्षित रख सकती है। हिंदी के द्वारा ही आंतरिक विविधता हो सकता है। अर्थात् संस्कृति का आदान-प्रदान किया जा सकता है तथा भारतवासियों को एक माता में रोशनी जा सकता है। हिंदी में उपचार नहीं है जो विविध फूलों का संग्रह किया है। अर्थात् हिंदी के द्वारा ही अनेक भाषा - भावी प्रेमनिक में जोर बढ़ाया है तथा हिंदी ही भारत की एकता सीधित को सुपक्षित रखे हुए है। जब अंग्रेजी की राजस्थान भाषा में आए और भारतीय लोगों को गुलामी के सिक्के में जबड़ लिया था, तब हिंदी के द्वारा लोगों की सुरक्षा आत्मा को जगाया गया था और आज भी हिंदी के द्वारा ही देश की एकता सुपक्षित है।

हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करने के लिए हिंदी को प्रतिवाद से बचाना होगा। न इसमें कहीं, काफी ही, आंदोल आदि के शब्दों की भस्मार हो और न यह अविश्वसनीय संख्या शब्दों से दुर्लभ हो। यह जनता का जर्नलिया की कंड्हर बने, इसके लिए श्री बल्लभगृहित्तिक की विषयरूपित उपायों तथा सभी भाषाओं के साथ सौहार्द बढ़ाकर इसे स्वचालित करनी होगी इसी विशाल दृष्टि से हिंदी को गौरव दिया जा सकता है।

223